देवताओं, अवतारों और ऋषियों की उपास्य

गायत्री

सर्वफल प्रदा उपास्य
सर्वश्रेष्ठ गायत्री

भारतीय धर्म के उपासना विज्ञान में गायत्री को सर्वोपरि माना गया है और सर्वश्रेष्ठ कहा गया है । इसके कई कारण हैं, एक तो यह कि इस महामंत्र के अक्षरों में बीज रूप में मानवीय संस्कृति एवं आदर्श वादिता के सारे सिद्धान्त सन्निहित हैं । इसे विश्व का सबसे छोटा मात्र २४ अक्षरों का वह ग्रंथ कह सकते हैं, जिसमें धर्म और अध्यात्म का समूचा तत्व ज्ञान सार रूप में समाविष्ट मिल सकता है । इन अक्षरों की व्याख्या करते हुए जो कुछ मानवी प्रगति एवं सुव्यवस्था के लिए आवश्यक है, यही प्रज्ञा का, विवेकशीलता का मन्त्र है । कहना न होगा कि मनुष्य जीवन की समस्त समस्याएँ दुर्बुद्धि के कारण उत्पन्न होती हैं । संसार पर आये दिन छाये रहने वाले संकट के बादल अशुभ चिन्तन के खारे समुद्र में ही उठते हैं । विवेक सर्वोपरि है । सद्बुद्धि से बढ़कर इस संसार में और कुछ नहीं है । यह तथ्य प्रज्ञा की देवी गायत्री को सर्वोपरि ठहराने में सन्निहित है ।

गायत्री सद्बुद्धि ही है, इस महामंत्र में सद्बुद्धि के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गई । इसके २४ अक्षरों में २४ अमूल्य शिक्षा संदेश भरे हुए हैं, वे सद्बुद्धि के मूर्तिमान प्रतीक हैं, उन शिक्षाओं में वे सभी आधार मौजूद हैं जिन्हें हृदयंगम करने वाले का सम्पूर्ण दृष्टिकोण शुद्ध हो जाता है और उस भ्रम जन्य अविद्या का नाश हो जाता है, जो आये दिन कोई न कोई कष्ट उत्पन्न करती है । गायत्री महा मंत्र की रचना ऐसे वैज्ञानिक आधार पर हुई है कि उसकी साधना से अपने भीतर छिपे हुए अनेकों गुप्त शक्ति केन्द्र खुल जाते हैं और अन्तःस्थल में सात्विकता की निर्झरिणी बहने लगती है । विश्वव्यापी प्राण को अपनी प्रबल चुम्बक शक्ति से खींचकर अन्तः प्रदेश में जमा कर देने की अद्भुत शक्ति गायत्री में मौजूद है । इन सब कारणों से कुबुद्धि का शमन करने में गायत्री अचूक रामबाण मन्त्र की तरह प्रभावशाली सिद्ध होती है । इस शमन के साथ-साथ अनेकों दुःखों का समाप्त हो जाना भी पूर्णतया निश्चित है । गायत्री देवी प्रकाश की वह अखण्ड ज्योति है जिसके कारण कुबुद्धि का अज्ञानान्धकार दूर होता है और अपनी वही स्वाभाविक स्थिति प्राप्त हो जाती है, जिसको लेकर आत्मा इस पुण्यमयी धरती माता की परम शान्ति दायक गोदी में किलोल करने आया है ।

मनुष्य ईश्वर का उत्तराधिकारी एवं राजकुमार है । आत्मा परमात्मा का ही अंश है । अपने पिता के सम्पूर्ण गुण एवं वैभव बीज रूप से उसमें मौजूद हैं । जलते हुए अंगार में जो शक्ति है वही छोटी चिनगारी में भी मौजूद है । इतना होते हुए भी हम देखते हैं कि मनुष्य निम्न कोटि का जीवन बिता रहा है । दिव्य होते हुए भी दैवी सम्पदाओं से वंचित हो रहा है ।

परमात्मा सत् है, परन्तु उसके पुत्र हम असत् में निमग्न हो रहे हैं । परमात्मा चित् है, हम अन्धकार में डूबे हुए हैं । परमात्मा आनन्द स्वरूप है, हम दुःखों से संत्रस्त हो रहे हैं । ऐसी उल्टी परिस्थिति उत्पन्न हो जाने का कारण क्या है ? यह विचारणीय प्रश्न है ।

जबकि ईश्वर का अविनाशी राजकुमार अपने पिता के इस सुरम्य उपवन संसार में विनोद क्रीडा करने के लिए आया हुआ है तो उसकी जीवन यात्रा आनन्दमयी न रहकर दुःख–दारिद्र से भरी हुई क्यों बन गई है ? यह एक विचारणीय पहेली है ।

अग्नि स्वभावतः उष्ण और प्रकाशवान होती है, परन्तु जब जलता हुआ अंगार बुझने लगता है, तो उसका ऊपरी भाग राख से ढक जाता है । तब उस राख से ढके हुए अंगार में वे दोनों ही गुण दृष्टिगोचर नहीं होते जो अग्नि में स्वभावतः होते हैं । बुझा हुआ, राख से ढका हुआ अंगार न तो गर्म होता है और न प्रकाशवान, वह काली–कलूटी कुरूप भस्म का ढेर मात्र बना हुआ पड़ा रहता है । जलते हुए अंगार को इस दुर्दशा में पहुँचाने का कारण वह भस्म है जिसने उसे चारों ओर से घेर लिया है । यदि यह राख की परत ऊपर से हटा दी जाय तो भीतरी भाग में फिर वैसी ही अग्नि मिल सकती है, जो अपने उष्णता और प्रकाश के गुण से सुसम्पन्न हो ।

परमात्मा सच्चिदानन्द है । वह आनन्द से ओत–प्रोत है । उसका पुत्र आत्मा भी आनन्दमय ही होना चाहिए । जीवन की विनोद क्रीड़ा करते हुए इस नन्दनवन में उसे आनन्द ही आनन्द अनुभव होना चाहिए । इस वास्तविकता को छुपाकर जो उसके बिल्कुल उल्टी दुःख–दारिद्र और क्लेश–कलह की स्थिति उत्पन्न कर देती है, वह कुबुद्धि रूप राख है । जैसे अंगार को राख ढककर उसको अपनी स्वाभाविक स्थिति से वंचित कर देती है, वैसे ही आत्मा की परम सात्विक, परम आनन्दमयी स्थिति को यह कुबुद्धि ढक लेती है और मनुष्य निकृष्ट कोटि का दीन–हीन जीवन व्यतीत करने लगता है ।

'कुबुद्धि' को ही माया, असुरता, अन्धतमिस्र, अविद्या आदि नामों से

पुकारते हैं । यह आवरण मनुष्य की मनोभूमि पर जितना मोटा चढ़ा होता है वह उतना ही दुःखी पाया जाता है । शरीर पर मैल की जितनी तह जम रही होगी उतनी खुजली मचेगी और दुर्गन्ध उमड़ेगी । यह तह जितनी ही कम होगी उतनी ही खुजली और दुर्गन्ध कम होगी । शरीर में दूषित विजातीय विष एकत्रित न हो तो किसी प्रकार का कोई रोग न होगा । पर यह विकृतियाँ जितनी अधिक जमा होती जायेंगी शरीर उतना ही रोग ग्रस्त होता जायेगा । कुबुद्धि एक प्रकार से शरीर पर जमी हुई मैल की तह या रक्त से भरी हुई विषैली विकृति है; जिसके कारण खुजली, दुर्गन्ध, बीमारी तथा अनेक प्रकार की अन्य असुविधाओं के समान जीवन में नाना प्रकार की पीड़ा, चिन्ता, बेचैनी और परेशानी उत्पन्न होती रहती है ।

लोग नाना प्रकार के दुःखों से दुःखी हैं । कोई बीमारी से कराह रहा है, कोई गरीबी से दुःखी है, किसी का दाम्पत्य जीवन कष्टमय है, किसी को सन्तान की चिन्ता है । व्यापार में घाटा, उन्नति में अड़चन, असफलता की आशंका, मुकद्दमा, शत्रु के आक्रमण का भय, अन्याय का उत्पीड़न, मित्रों का विश्वासघात, दहेज की चिन्ता, प्रियजनों का विछोह आदि दुःख आये दिनों दुःखी बनाये रहते हैं । व्यक्तिगत जीवन की भाँति धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में अशान्ति कम नहीं है । यदि कोई व्यक्ति अपने आपको बहुत सम्भाल कर रखे, तो भी व्यापक बुराइयों एवं कुव्यवस्थाओं के कारण उसकी शान्ति नष्ट हो जाती है और जीवन का आनन्दमय उद्देश्य प्राप्त करने में बाधा पड़ती है ।

दुःख चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक उनका कारण एक ही है और वह है कुबुद्धि । संसार में इतने प्रचुर परिमाण में सुख साधन भरे पड़े हैं कि इन खिलौनों से खेलते-खेलते सारा जीवन हँसी-खुशी से बीत सकता है । मनुष्य को ऐसा अमूल्य शरीर, मस्तिष्क एवं इन्द्रिय समूह मिला हुआ है कि इसके द्वारा साधारण वस्तुओं एवं परिस्थितियों में भी इतना आनन्द लिया जा सकता है कि स्वर्ग भी उसकी तुलना में तुच्छ सिद्ध हो । इतना सब होते हुए भी लोग बेतरह दुःखी हैं, जिन्दगी में कोई रस नहीं, मौत के दिन पूरे करने के लिए समय को एक बोझ की तरह काटा जा रहा है । मन में चिन्ता, बेबसी, भय, दीनता और बेचैनी की अग्नि दिनभर जलती रहती है, जिसके कारण पुराणों में वर्णित नारकीय यातनाओं जैसी व्यथायें सहनी पड़ती हैं ।

यह संसार चित्र सा सुन्दर है, इसमें कुरूपता का एक कण भी नहीं ।

यह विश्व विनोदमयी क्रीडा का प्रांगण है इसमें चिन्ता और भय के लिए कोई स्थान नहीं । यह जीवन आनन्द का निर्बाध निर्झर है, इसमें दुःखी रहने का कोई कारण नहीं । स्वर्गादपि गरीयसी–इस जननी जन्म भूमि में वे सभी तत्व मौजूद हैं जो मानस की कली को खिलाते हैं । इस सुर दुर्लभ नर तन की रचना ऐसे सुन्दर ढंग से हुई है कि साधारण वस्तुओं को वह अपने स्पर्श मात्र से ही सरस बना लेता है । परमात्मा का राजकुमार आत्मा इस संसार में क्रीडा कलोल करने आता है । उसे शरीर रूपी रथ, इन्द्रियों रूपी सेवक, मस्तिष्क रूपी मंत्री देकर परमात्मा ने यहाँ इसलिए भेजा है कि इस नन्दन वन जैसे संसार की शोभा को देखे, उसमें सर्वत्र बिखरी हुई सरलता का स्पर्श और आस्वादन करे । प्रभु के इस महान उद्देश्य में बाधा उपस्थित करने वाली, स्वर्ग को नरक बना देने वाली कोई वस्तु है तो वह केवल कुबुद्धि ही है ।

स्वस्थता हमारी स्वाभाविक स्थिति है बीमारी अस्वाभाविक एवं अपनी भूल से पैदा हुई है । पशु–पक्षी जो प्रकृति का स्वाभाविक अनुसरण करते हैं, बीमार नहीं पड़ते, वे सदा स्वास्थ्य का सुख भोगते हैं पर मनुष्य नाना प्रकार के मिथ्या आहार–विहार द्वारा बीमारी को न्योंत बुलाता है । यदि वह भी अपना आहार–विहार प्रकृति के अनुकूल रखे तो कभी बीमार न पड़े । इसी प्रकार सद्बुद्धि स्वाभाविक है । यह ईश्वर प्रदत्त है, दैवी है, जन्म जात है, जीवन संगिनी है । संसार में भेजते समय प्रभु हमें सद्बुद्धि रूपी कामधेनु भी देते हैं ताकि वह हमारे सम्पूर्ण सुख–साधन जुटाती रहे, परन्तु हम भूलवश, भ्रमवश, अज्ञानवश, मायाग्रस्त होकर सद्बुद्धि को त्यागकर कुबुद्धि को अपना लेते हैं और जैसे मिथ्याचरण से बीमारी न्योत बुलाई जाती है वैसे ही मानसिक अव्यवस्था के कारण कुबुद्धि को आमंत्रित किया जाता है । यह पिशाचिनी जहाँ आई नहीं कि जीवन का सारा क्रम उल्टा नहीं । दोंनों एक साथ नहीं रह सकतीं । जहाँ कुबुद्धि होगी, वहाँ अशान्ति, चिन्ता, तृष्णा, नीचता, कायरता आदि की कष्ट कारक स्थितियों का ही निवास होगा ।

रंगीन काँच का चश्मा पहन लेने पर आँखों से सभी वस्तुऐं रंगीन दिखाई देती हैं । यद्यपि उन वस्तुओं का वैसा रंग नहीं होता फिर भी चश्मे के काँच का रंग जैसा होता है, वैसा ही आस पास का जगत दिखाई देने लगता है । कुबुद्धि का चश्मा लगाने से, बुद्धि–भ्रम हो जाने से सीधी साधारण सी परिस्थितियाँ और घटनायें भी दुःखदाई दिखाई देने लगती हैं । गायत्री

महामंत्र का प्रधान कार्य कुबुद्धि का निवारण और ऋतम्भरा प्रज्ञा का जागरण है ।

इसके अतिरिक्त गायत्री मंत्र में एक और विशेषता यह है कि उसमें शब्द विज्ञान–स्वर शास्त्र का जैसा संगम हुआ है, वैसा अन्य किसी मंत्र में नहीं हुआ है । साधनारत योगियों और तपस्वियों ने अपने प्रयोग, परीक्षणों और अनुभवों के आधार पर जो तुलनात्मक उत्कृष्टता देखी है, उसी से प्रभावित होकर उन्होंने गायत्री महाशक्ति को सर्वोपरि स्थान दिया । इस सन्दर्भ में मिलने वाले शास्त्र वचनों में से कुछ इस प्रकार हैं :–

गायत्र्या न परं मन्त्रं न बीजं प्रणवाधिकम् ।
गायत्र्या न परं जप्यं गायत्र्या न परं तपः ।
गायत्र्या न परं ध्यानं गायत्र्या न परं हुतम् ।
हविष्यं घृतसंयुक्तं गायत्री मन्त्र पूर्वकम् ।

–विश्वामित्र कल्प

अर्थात्–गायत्री से बढ़कर अन्य कोई मन्त्र, जप, ध्यान, तप कहीं नहीं हैं । गायत्री यज्ञ से बढ़कर और कोई यज्ञ नहीं है ।

गायत्री परदेवतेति गदिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी ।।

–देव्युपनिषद्

अर्थात्–गायत्री परादेवता कही गई है और वह चित्तस्वरूपा गायत्री साक्षात् ब्रह्म ही है ।

'महाभारत' में भीष्म पितामह का वचन है कि–

परां सिद्धिमवाप्नोति गायत्रीमुत्तमां पठेत् ।

जो मनुष्य सर्व श्रेष्ठ गायत्री का जप करता है वह परम् सिद्धि को पाता है ।

अष्टादशसु विद्यासु मीमांसाति गरीयसी ।
ततोऽपि तर्क शास्त्राणि पुराणास्तेभ्य एव च ।
ततोऽपि धर्म शास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्विज ।
ततोऽप्युपनिषच्छ्रेष्टा गायत्री च ततोऽधिका ।
दुर्लभा सर्व मन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता ।

–वृहत् सन्ध्या भाष्य

अठारह प्रकार की विद्याओं में मीमांसा (कर्मकाण्ड) श्रेष्ठ है । मीमांसा से तर्क–विवेक उत्तम है । न्याय से पुराणों की गरिमा अधिक है ।

पुराणों में धर्मशास्त्र और धर्मशास्त्रों में वेदों की महिमा अधिक है । वेदों की व्याख्या करने वाली उपनिषदों की उपयोगिता और भी अधिक है । उपनिषदों से भी गायत्री श्रेष्ठ है । समस्त मन्त्रों में प्रणव युक्त गायत्री की महिमा सर्वोपरि है ।

गायत्रीं यः परित्यज्य चान्यमन्त्रमुपासते ।
न साफल्यमवाप्नोति कल्पकोटिशतैरपि ।

–वृहत संध्या भाष्य

जो गायत्री को त्यागकर अन्य मंत्र की उपासना करता है वह सौ कोटि कल्पों में भी अभीष्ट सफलता प्राप्त नहीं कर सकता ।

जपतां जुह्वतां चैव नित्यं च प्रयतात्मनाम् ।
ऋषीणां परमं जप्यं गुह्य मेतन्नराधिप ।

–महाभारत

नित्य जप करने के लिए, हवन करने के लिए ऋषियों का परम् मंत्र गायत्री ही है ।

गायत्री सर्वमंत्राणां शिरोमणि तया स्थिता ।
विधानामपि तेनैतां साधयेत्सर्वसिद्धये ।
त्रिव्याहृतियुतां देवीमोंकारयुगसम्पुटाम् ।
उपास्य चतुरोवर्गान् साधयेद्यो न सोन्धकः ।
देव्या द्विजत्वमासाद्य श्रेयसे विरतास्तुये ।
ते रत्नमभिवांच्छन्ति हित्वा चिन्तामणिं करात् ।

–ब्रह्म वार्तिक

गायत्री सब मन्त्रों में तथा विद्याओं में शिरोमणि है । उससे सब इन्द्रियों की साधना होती है । जो व्यक्ति इस उपासना से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पदार्थों को प्राप्त नहीं करते वे अन्धबुद्धि वाले हैं । जो गायत्री जैसे मंत्र के होते हुए भी अन्य मन्त्रों की उपासनाऐं करते हैं वे ऐसे ही मूर्ख हैं जैसे हाथ आई चिन्तामणि को फेंककर छोटे–छोटे रत्न कणों को ढूँढ़ने वाले मूर्ख ।

गायत्री वेदजननी गायत्री लोकपावनी ।
न गायत्र्याः परं जप्यमेतद्विज्ञाय मुच्यते ।।

–कूर्म पुराण

वेद–जननी गायत्री इस संसार में सर्वाधिक पवित्र करने वाली है ।

विद्वानों का कथन है कि गायत्री से बढ़कर अन्य कोई जप नहीं है ।

सावित्र्यास्तु परं नास्ति शोधनम् सर्वकर्मणाम् ।

—अग्नि वृद्धा चस्तम्बी

सब कर्मों को शुद्ध करने के लिए गायत्री से बढ़ कर और कुछ नहीं है ।

अष्टादशसु विद्यासु मीमांसातिगरीयसी ।
ततोऽपि तर्कशास्त्राणि पुराणं तेभ्य एवच ।।
ततोऽपि धर्मशास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्विज ।
ततोऽप्युप निषच्छ्रेष्टा गायत्री च ततोऽधिका ।।

—स्कन्दपुराण काशीखण्ड ९।४९।५०

अष्टादश विद्याओं में मीमांसा शास्त्र, मीमांसा से तर्कशास्त्र, तर्कशास्त्र से पुराण शास्त्र, पुराण से धर्म शास्त्र, धर्मशास्त्र से वेद, वेद से उपनिषद और उपनिषद से गायत्री का महत्व अधिक है ।

कुर्यादन्यन्नवा कुर्यादनुष्ठानादिकम् तथा ।
गायत्रीमात्रनिष्ठस्तु कृत्यकृत्यो भवेद्विजः ।।

—गायत्री तन्त्र

अन्य उपासना, अनुष्ठान आदि करें न करें गायत्री मन्त्र की उपासना करने वाला द्विज कृतकृत्य हो जाता है ।

सप्तकोटि महामन्त्रा गायत्रीप्रायकाः स्मृताः ।
आदिदेवमुपासन्ते गायत्री वेदमातरम् ।।

—गायत्री कल्प

करोड़ों मन्त्रों में सर्व प्रमुख मन्त्र गायत्री है जिसकी उपासना ब्रह्मा आदि देव भी करते हैं । वह गायत्री ही वेदों का मूल है ।

इत्युक्ता च महादेवी मूलप्रकृतिरीश्वरी ।।
अन्तर्धानं गता सद्यो भक्त्या देवैरभिष्टुता ।।
ततः सर्वे स्वगर्वं तु विहाय पदपंकजम् ।।
सम्यगाराधयामासुर्भगवत्याः परात्परम् ।।
त्रिसंध्यं सर्वदा सर्वे गायत्रीजपतत्पराः ।।
यज्ञभागादिभिः सर्वे देवीं नित्यं सिषेविरे ।।
न विष्णूपासना नित्या वेदेनोक्ता तु कुत्रचित् ।।
न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ।।

गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता ।।
यया विना त्वधःपातो ब्राह्मणस्याऽस्ति सर्वथा ।।
तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि ।।
गायत्रीमात्रनिष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात् ।।
कुर्यादन्यं न वा कुर्यादिति प्राह मनुः स्वयम् ।।

–देवी भागवत् १२।८।८४ से ९१

व्यास जी बोले–"अपना निर्देश देकर–भगवती अन्तर्धान हो गई, पीछे सब देवता अभिमान और अज्ञान छोड़कर उसी परम् शक्ति की उपासना में लग गये ।"

सब त्रिकाल संध्याराधनापूर्वक गायत्री मन्त्र के जप में तत्पर रहने लगे । यज्ञ भाग देने लगे । विष्णु अथवा शिव की उपासना नित्य नहीं है । गायत्री उपासना को वेदों ने नित्य कहा है । इस गायत्री से रहित विप्र का अधः पतन हो जाता है । किसी भी अन्य उपासना का उतना सत्परिणाम नहीं जितना गायत्री का । केवल गायत्री उपासना से ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है, भले ही और कोई साधना न करें । मनु भगवान ने भी ऐसा ही कहा है ।

अष्टादशसुविद्यासु मीमांसातिगरीयसी ।
ततोऽपितर्कशास्त्राणि पुराणास्तेभ्य एव च ।।
ततोऽपिधर्मशास्त्राणितेभ्यो गुर्वीश्रुतिर्द्विज ।
ततोप्युपनिषच्छ्रेष्टागायत्री च ततोऽधिका ।।
दुर्लभासर्वमन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता ।
न गायत्र्यधिकं किञ्चित्त्रयीषु परिगीयते ।।
न गायत्रीसमो मन्त्रोनकाशीसदृशी पुरी ।

–स्कंद पुराण

अठारह विद्याओं में मीमांसा विद्या अत्यंत बड़ी है । इससे भी अधिक गुरु तर्क शास्त्र हैं । उनसे भी अधिक पुराण हैं और उनसे भी अधिक धर्म शास्त्र होते हैं और इनसे भी अधिक गुरु श्रुति हैं । हे द्विज ! श्रुतियों से भी अधिक गुरु उपनिषद् हैं और इनसे भी परम श्रेष्ठ गायत्री होती है । इससे अधिक कोई भी नहीं है, प्रणव से समन्वित गायत्री सभी मन्त्रों में दुर्लभा है । त्रयी में अर्थात् वेद त्रयी में गायत्री से अधिक कुछ भी नहीं परिगीत किया जाता है, गायत्री के समान कोई अन्य मन्त्र नहीं है और काशी के समान अन्य कोई भी पुरी नहीं है ।

गायत्री वेदजननी गायत्री ब्राह्मणप्रसूः ।
गातारं त्रायतेयस्माद्गायत्री तेन गीयते ।।

वाच्यवाचक सम्बन्धोगायत्र्याः सवितुर्द्वयोः ।।
वाच्योसो सविता साक्षाद्गायत्री वाचिका परा ।
प्रभावेणैवगायत्र्याः क्षत्रियः कौशिकोवशी ।
राजर्षित्वपरित्यज्यब्रह्मर्षिपदमीयिवान ।।
सामर्थ्यं प्राप चात्युच्चैरन्यद्भुवनसर्जने ।
किं किं न दद्याद्गायत्री सम्यगेवमुपासिता ।

यह गायत्री वेदों की जननी है । गायत्री ब्राह्मणों को प्रसूत करने वाली है । क्योंकि इसका जो गायन (जाप) करता है उसकी यह सुरक्षा किया करती है, इसलिए इसको गायत्री कहा जाता है । गायत्री और सविता इन दोंनों का वाक्य वाचक सम्बन्ध होता है । वाच्य तो भगवान् सविता देव हैं और गायत्री साक्षात् परा उनकी वाचिका होती हैं । इस गायत्री के ही प्रभाव से क्षत्रिय वंशी कौशिक (विश्वामित्र) राजर्षित्व का त्याग करके ब्रह्मर्षि के पद को प्राप्त हो गये । दूसरा बहुत ऊँचा भुवन निर्माण करने की भी उन्होंने सामर्थ्य प्राप्त करली थी । भली–भाँति से उपासना की हुई गायत्री देवी मनुष्य को क्या–क्या नहीं दे दिया करती हैं ?

अन्याय मन्त्रों की तुलना में गायत्री की श्रेष्ठता बताई है और यह भी कहा गया है कि इस एक ही बीज उपासना को अपनाने से वेदाध्ययन का लाभ मिल जाता है । अन्य मन्त्रों की तुलना में गायत्री की विशेषता से इन्कार नहीं किया जा सकता । इस प्रसंग में कुछ प्रमाण इस प्रकार मिलते हैं–

सर्वेषां जपसूक्तानामृचाञ्च यजुषां तथा ।
साम्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः ।

–वृद्ध पाराशर स्मृति, ४।४

वेदों के अनेक मन्त्र, जप, सूक्त, ओंकार आदि उपासनाऐं हैं । उन सब में गायत्री मन्त्र परम श्रेष्ठ है ।

अष्टादसु विद्यासु मीमांसातिगरीयसी ।
ततोऽपि तर्क शास्त्राणि पुराणं तेभ्य एव च ।।
ततोऽपि धर्म शास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्विज ।
ततोऽप्युनिषच्छ्रेष्ठा गायत्री च ततोऽधिका ।।

(स्कंद पुराण, काशी खण्ड १।४९–५०)

अर्थात्–"अठारह विधाओं में मीमांसा बहुत महत्वपूर्ण माना गया है । उससे अधिक तर्कशास्त्र, तर्कशास्त्र से अधिक पुराण, पुराण से अधिक

धर्मशास्त्र, धर्मशास्त्र से अधिक वेद, वेद से उपनिषद् और उपनिषद् से गायत्री का महत्व अधिक है ।"

सर्वेषां जप सूक्तानामृचाञ्च यजुषान्तथा ।
साम्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः ।।
तस्याश्चैव तु ओंकारो ब्रह्मणा य उपासितः ।
आभ्यान्तु परमं जप्यं त्रैलोक्येऽपि न विद्यते ।।

(वृहत् पाराशर संहिता)

"सम्पूर्ण सूक्तों में, ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद में तथा प्रणवादि जितने हैं उन सबमें गायत्री को सर्वश्रेष्ठ कहा है । जिस ओंकार की उपासना ब्रह्माजी ने की थी वह भी उसी का अंग है । इन दोनों से बढ़कर जपने योग्य तीनों लोकों में और कुछ नहीं है ।"

पुराणं संहिताशास्त्रं स्मृतिशास्त्रं तथैव च ।
गायत्र्याः परमेशानि सदर्थं ब्रह्मसम्मितम् ।।

हे परमेशानि ! पुराण, संहिता शास्त्र तथा स्मृति शास्त्र और गायत्री का सत् अर्थ यह सब ब्रह्म समर्थित हैं ।।१०५।।

सांगांश्च चतुरोवेदानधीत्यापि सवाङ्गयात् ।
सावित्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ।।

—योगी याज्ञवलक्य

समस्त अंग उप—अंगों समेत वेदों को पढ़ लेने पर भी जो गायत्री को नहीं जानता उसका परिश्रम व्यर्थ ही गया समझना चाहिए ।

गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलायां समतोलयत् ।
वेदा एकत्र सांगास्तु गायत्री चैकतः स्मृता ।।

(वृहद् योगी याज्ञ. ४—८०)

अर्थात्—"जब ब्रह्माजी ने तराजू के एक पलड़े में चारों वेदों को और दूसरे में गायत्री को रखकर तोला तो गायत्री चारों वेदों की अपेक्षा भारी सिद्ध हुई ।"

यहाँ माता और पुत्रों की तुलना में माता की गरिमा अधिक भारी सिद्ध करने का तात्पर्य है ।

इन्हीं सब विशेषताओं को देखते हुए गायत्री को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के चारों फल प्रदान करने वाली—पाप,ताप, शोक, संताप निवारणी कहा गया है । उसे सर्वोपरि साधना बताया है ।

स्कन्द पुराण में महर्षि व्यास का कथन है :—

गायत्र्येव तपो योगः साधनं ध्यानमुच्यते ।
सिद्धिनां सा मता माता नातः किंचिद् वृहत्तरम् ।।

—स्कंद पुराण

गायत्री ही तप है, गायत्री ही योग है, गायत्री ही सबसे बड़ा ध्यान और साधन है । इससे बढ़कर सिद्धि दायक साधन और कोई नहीं है ।

भगवान मनु भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हुए कहते हैं—

सावित्र्यास्तु परन्नास्ति । —मनु.।८३

गायत्री से श्रेष्ठ और कुछ नहीं है ।

मनुस्मृति में तो इस महान तत्व ज्ञान और उपासना की पग—पग पर महत्ता प्रतिपादित की गयी है । कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं :—

जप्येनैव तु संसिध्येद् ब्राह्मणो नात्रसंशयः ।
कुर्यादन्यन्नं वा कुर्यान्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते ।।

(मनु. २।८७)

अर्थात्—गायत्री उपासना समस्त सिद्धियों की आधारभूत है, गायत्री उपासक अन्य कोई अनुष्ठान न करे तो भी सबसे मित्रवत आचरण करता हुआ ब्रह्म को प्राप्त करता है क्योंकि जप से उसका चित्त ब्राह्मी चेतना की तरह शुद्ध व पवित्र हो जाता है ।

पूर्वां सध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीयमार्कदर्शनात् ।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात् ।।

(मनु. २।७०)

हे तात् ! प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व से सूर्योदय तक खड़ा होकर गायत्री जप करने वाला, सायंकाल तारों के निकलने तक बैठ कर जप करने वाले उपासक भौतिक और आध्यात्मिक समृद्धि के अधिकारी बनते हैं ।

अपां समीपे नियतो नैत्यकंविधिमास्थितः ।
सावित्रीमप्यधीयति गत्वारण्यंसमाहितः ।।

(मनु. २।७०४)

अर्थात्—नगर की अशान्ति से दूर वन में किसी सरोवर के समीप जाकर की गयी गायत्री उपासना से मन की एकाग्रता और असीम शान्ति का लाभ मिलता है ।

गायत्री मात्र सारोऽपि वरंविप्रः सूर्यान्त्रतः ।
नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी ।।

(मनु. २।१७८)

अर्थात्—केवल गायत्री उपासना करने वाला संयमी पुरुष, सर्वभक्षी, सबकुछ बेचने वाले वेद पाठी ब्राह्मण से भी श्रेष्ठ कहलाता है ।

एतदक्षरमेतां च जपन् व्याहृति पूर्विकाम् ।
सन्ध्योर्वेदविद्विप्रो वेद पुण्येन युज्यते ।।

(मनु. २।७८)

अर्थात्—ओंकार और व्याहृति पूर्वक दोनों संध्याओं के समय गायत्री उपासना करने वाले को स्वयं ही वेद ज्ञान प्राप्त हो जाता है ।

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः ।
स ब्रह्म परमभ्येति वायुभूतः खंमूर्तिमान् ।।

(मनु. २।८२)

अर्थात्—यदि उपासक तीन वर्षों तक निरालस्य नियम पूर्वक गायत्री मंत्र का जप करता है तो वह वायु और विराट आकाश में व्याप्त चेतना को भली प्रकार जान लेता है और परमात्मा को प्राप्त करने का अधिकार पा लेता है ।

गीता में कहा गया है :—

गायत्री छन्दसामहम् । (अ. १०।३५)

छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ ।

गायत्री परदेवतेति गदिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी ।।

—गायत्री पुरश्चरण प.

गायत्री परम श्रेष्ठ देवता और चित्तरूपी ब्रह्म है, ऐसा कहा गया है ।

गायत्री वा इदं सर्वभूतं यदिदंकिंच ।

—छन्दोग्योपनिषद्

यह विश्व जो कुछ भी है वह समस्त गायत्रीमय है ।

गायत्री प्रत्यग्ब्रह्मैक्यबोधिका ।

—शांकरभाष्य

गायत्री प्रत्यक्ष अद्वैत ब्रह्म की बोधक है ।

शास्त्रों, पुराणों में इस तरह के असंख्यों उदाहरण भरे पड़े हैं जिनमें गायत्री को भारतीय संस्कृति की जननी, परम् उपास्या कहा गया है । यही नहीं गायत्री की उपासना न करने वालों की निन्दा, भर्त्सना भी की गयी है ।

उपरोक्त प्रतिस्थापनायें निःसन्देह बहुत महत्वपूर्ण थीं, जब तक इनका परिपालन हुआ देश भौतिक और अध्यात्मिक दोंनों ही दृष्टि से विश्व शिरोमणि रहा । इस महाशक्ति से वंचित हो जाने पर ही देश की नीवें खोखली हो गयीं । उन्हें सुदृढ़ बनाने के लिए गायत्री उपासना को व्यापक बनाया जाना अनिवार्य है ।

वेदमाता–देवमाता भगवती गायत्री

गायत्री को भारतीय संस्कृति की जननी और यज्ञ को भारतीय धर्म का पिता कहा गया है । उसे वेदमाता, देवमाता एवं विश्वमाता कहा गया है । वेदों से लेकर धर्म शास्त्रों तक का समस्त दिव्य ज्ञान गायत्री के बीजाक्षरों का ही विस्तार है । योग साधना और तपश्चर्या की शक्ति–धाराएँ गायत्री के हिमालय से ही प्रकटी हैं । उसकी साधना के सत्परिणाम अमृत, कल्पवृक्ष, कामधेनु और ब्रह्मानन्द बताये गये हैं । पाँच प्रमुख देवताओं के यही पाँच वरदान हैं । इसी रहस्य के कारण उसका एक स्वरूप पाँच मुख वाला भी चित्रित किया जाता है । भौतिक सिद्धियों और आत्मिक विभूतियों के अनन्त भण्डार इस महाशक्ति के अन्तराल में छिपे पड़े हैं । साधना से सिद्धि का सिद्धान्त विधिवत गायत्री साधना से प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो सकता है । सांसारिक संकटों में भी गायत्री उपासना वरदान की तरह सिद्ध होती है । आद्या शक्ति गायत्री माता का अंचल पकड़ने वाला कभी निराश नहीं हुआ ।

गायत्री मंत्र में चौबीस अक्षर हैं । तत्वज्ञानियों ने इन अक्षरों में बीज रूप विद्यमान उन शक्तियों को पहचाना जिन्हें चौबीस अवतार, चौबीस ऋषि, चौबीस शक्तियाँ तथा चौबीस सिद्धियाँ कहा जाता है । देवर्षि, ब्रह्मर्षि तथा राजर्षि इसी उपासना के सहारे उच्च पदासीन हुए हैं । 'अणोरणीयान महतो महीयान' यही महाशक्ति है । छोटे से छोटा चौबीस अक्षर का कलेवर, उसमें ज्ञान और विज्ञान का सम्पूर्ण भाण्डागार भरा हुआ है । सृष्टि में ऐसा कुछ भी नहीं जो गायत्री में न हो, उसकी उच्चस्तरीय साधनायें कठिन और विशिष्ट भी हैं । पर साथ ही सरल भी इतनी हैं कि उन्हें हर स्थिति में बड़ी सरलता और सुविधाओं के साथ सम्पन्न किया जा सकता है । इसी से उसे सार्वजनीन और सार्वभौम माना गया । नर–नारी, बाल–वृद्ध बिना किसी जाति व सम्प्रदाय भेद के उसकी आराधना प्रसन्नता पूर्वक कर सकते हैं और अपनी श्रद्धा के अनुरूप लाभ उठा सकते हैं ।

गायत्री के ही चार चरणों की व्याख्या स्वरूप चार वेद बने हैं ।

इसीलिए गायत्री को वेद माता कहते हैं । ज्ञान की विवेचना में ही अन्य शास्त्र पुराण रचे गये हैं । भारतीय तत्वदर्शन और ज्ञान-विज्ञान गायत्री बीज से ही उत्पन्न हैं । इसी की उपासना, आराधना के सहारे प्राचीन भारत के महान नागरिक देवोपम बने थे, अतएव गायत्री को देव माता भी कहा गया ।

गायत्री साधना के तीन चरण

शरीर, मन और आत्मा को बलवान बनाने की प्रक्रिया

गायत्री को त्रिपदा कहा गया है । त्रिपदा अर्थात् तीन पद-चरण वाली । तीन शरीर, तीन लोक, तीन गुण, त्रैत ब्रह्म, तीन देव, तीन शक्ति, तीन काल के रूप में इस त्रिपदा शक्ति का विस्तार माना और विवेचन किया जाता है । इसके तीन फल हैं--अमृत, पारस और कल्पवृक्ष । त्रिपदा के यह तीन अनुग्रह, तीन वरदान तत्वदर्शियों ने बताये हैं । भौतिक सम्पत्तियाँ और आत्मिक विभूतियाँ इन तीनों के ही अन्तर्गत आ जाती हैं । आयु, प्राण, प्रज्ञा, पशु, कीर्ति, द्रव्य और ब्रह्मवर्चस् के जो सात प्रतिफल अथर्ववेद में बताये गये हैं वे सब भी इस अमृत, पारस, कल्पवृक्ष की परिधि गणना में ही समा जाते हैं ।

आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक क्षेत्र की सुविधा-समृद्धियों का संवर्धन और अभाव-अवरोधों का निरन्तर निराकरण ही हर किसी को अभीष्ट होता है । सारी सुविधा की गणना इसी परिधि में की जा सकती है । कठिनाइयों के नाम रूप का विस्तार कितना ही बड़ा क्यों न हो वस्तुतः वे इन्हीं आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक क्षेत्र के अन्तर्गत ही आती हैं । इन सभी के समाधान को अमृत, पारस और कल्पवृक्ष का अलंकारिक नामकरण किया गया है । गायत्री माता के अनुग्रह से यह तीनों ही विभूतियाँ उपलब्ध होने की बात शास्त्रकार ने कही है । सुसम्पन्न, सुसंस्कृत मनुष्यों को देवता कहा गया है । देवत्व आकृति के साथ नहीं प्रकृति के साथ जुड़ा हुआ है । गुण, कर्म, स्वभाव से उसकी परख होती है । देवताओं का निवास स्थल स्वर्ग लोक कहा गया है । इसी बात को यों भी कहा जा सकता है कि जहाँ देवता निवास करते हैं वहाँ स्वर्गीय वातावरण बन जाता है ।

गायत्री को स्वर्गलोक की अधिष्ठात्री कहा गया है । उसका एक नाम कामधेनु भी है । कामधेनु का पयपान करने से देवताओं को देवत्व की प्राप्ति होती है । देवताओं के सुख-साधनों के स्रोत तीन हैं -(१) अमृत (२) पारस (३) कल्पवृक्ष । अमृत के आधार पर उन्हें आधिदैविक, पारस के

आधार पर अधिभौतिक और कल्पवृक्ष के आधार पर आधिदैविक सम्पदाओं की उपलब्धि होती है । त्रिपदा गायत्री की तात्विक उपासना में इन तीनों ही दिव्य वरदानों को, स्वर्गीय अनुदानों को प्राप्त कर सकना सम्भव बताया गया है ।

अमृत का अर्थ है वह पदार्थ जिसे पीने वाला अजर–अमर बनता है । बुढ़ापा और मृत्यु उसे छोड़कर चली जाती है । नव यौवन सदा बना रहता है तथा आनन्द–उल्लास से अन्तःकरण सदा पुलकित, हुलसित बना रहता है । कहा जाता है कि अमृत देव लोक में है । उसे देवता पीते हैं और वह लाभ प्राप्त करते हैं जो स्वर्गलोक के निवासियों में, दिव्य शरीरधारियों में पाये जाते हैं । अमृत पदार्थ का अस्तित्व प्राणि जगत में तो नहीं ही पाया गया है । यहाँ हर वस्तु जन्मती, बढ़ती और बदलती है । बढ़ने के क्रम में ही जवानी के बाद बुढ़ापे का पल्ला बँधा है । जीर्णता को दुबारा ढालना ही परिवर्तन है, इसी को मरण कहते हैं । यह स्वभाविक सृष्टि क्रम है ।

बुढ़ाता और मरता तो शरीर है । जब अपने को शरीर से भिन्न आत्मा मान लिया तो फिर अजर–अमर होने की अनुभूति सुनिश्चित हो जाती है । पुराने कपड़े बदलकर नये पहनने में तो बच्चे तक मोद मनाते हैं फिर मृत्यु का भय आत्मज्ञानी को कैसे होगा ? आत्मा तो आदि काल से अन्त तक प्रौढ़ ही रहती है उसके लिए न कभी बचपन है और न बुढ़ापा । दुःख और अभाव भी शरीर को ही कष्ट देते हैं, गायत्री उपासना में अमृतत्व की उपलब्धि की प्रेरणा, दिशा एवं सुविधा प्राप्त होती है इसलिए उसे कामधेनु कहा गया है । कामधेनु को भी अमृत का ही एक स्वरूप माना गया है । देवता उसे पीते और धन्य बनते हैं । उसे पीने से दुर्भावनायें आक्रमण नहीं करतीं, ईर्ष्या, द्वेष, रोष, प्रतिशोध के कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ते । फलतः आकाँक्षाओं की अशान्ति से सदा बचे रहते हैं । हर घड़ी मस्ती छाई रहती है । उल्लास समेटते और उमगें बखेरते हुए उन्हें देखा जा सकता है ।

यह अमृतत्व और देवत्व एक ही बात है । देवताओं को मनुष्य की अपेक्षा अधिक समर्थ, सम्पन्न और सन्तुष्ट माना जाता है । दे देने की आकाँक्षा रखना, देते रहना देवताओं का धर्म है । आत्मज्ञान का अमृतत्व पीने वाले व्यक्ति उपयोग के लिए लालायित नहीं रहते । जो प्राप्त होता है उसे अपने से अधिक जरूरत मन्द को बाँटते रहते हैं । इस कारण स्वल्प रहते हुए भी आत्मा तो अपने आप में परिपूर्ण है, उसे न किसी वस्तु की आवश्यकता है और न आकाँक्षा ही । इसकी सही अर्थों में अनुभूति हो सके

तो फिर चेहरे पर सदा तृप्ति और शान्ति ही छाई रहेगी । ऐसे लोग जीवन मुक्त कहलाते हैं । पृथ्वी के देवता समझे जाते हैं और अपने सम्पर्क क्षेत्र में स्वर्गिक वातावरण उत्पन्न करते हैं । अमृतत्व की उपलब्धि के यही लक्षण हैं ।

पारस उस पत्थर का नाम है जिसे छूने से लोहे जैसी काली कलूटी कुरूप और सस्ती धातु स्वर्ण बन जाती है । अर्थात् सुन्दर, बहुमूल्य, कीमती, चमकदार धातु । तथाकथित पारस का अस्तित्व संदिग्ध है । अभी उसके कहीं पाये जाने का प्रमाण नहीं मिला है । किन्तु अध्यात्म क्षेत्र का पारस 'पुरुषार्थ' के रूप में बहुत पहले से ही इस संसार में विद्यमान है । उसका सम्पर्क साधने वाले गई गुजरी स्थिति को पार करके द्रुतगति से आगे बढ़ते हैं और उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचते हैं ।

पुरुषार्थ का प्रथम चरण मानसिक है । उसे संकल्प, साहस, उत्साह, आशा, उमंग आदि सृजनात्मक अन्तः क्षमताओं के रूप में जाना जाता है । उसी का दूसरा चरण वह है जिसे तत्परता और तन्मयता के रूप में आँखों से प्रत्यक्ष देखा जा सकता है । आलस्य और प्रमाद ही पिछड़ेपन का अभिशाप लादने वाले दुष्ट दैत्य हैं, वे जिस पर चढ़ते हैं उसे सदा दरिद्रता, आत्महीनता और तिरस्कार भरा पिछड़ा जीवन जीना पड़ता है । आलस्य, प्रमाद के उपरान्त तीसरा असुर है असंयम ।

पुरुषार्थ रूपी पारस जिनकी अन्तः भूमिका में उतरता है वह अपनी इन मलीनताओं को लात मारकर भगा देने के लिए संकल्प पूर्वक उठ खड़ा होता है । छाई हुई जड़ता को, अर्ध मूर्छित जैसी मनः स्थिति को झकझोरकर रख देता है । नये सिरे से जीवनचर्या बनाता है और आदर्शों का अभिनव निर्माण करता है । यह कायाकल्प जिस आन्तरिक पुरुषार्थ के सहारे सम्भव होता है उस उत्कृष्टतावादी प्रगतिशील साहस को, प्रचण्ड संकल्प बल को पारस कहा गया है । इसका जहाँ उदय होगा रुग्णता, दुर्बलता, दरिद्रता, उदासी, अवमानना की लानतें सिर पर पैर रख कर भागती दिखाई पड़ेंगी ।

गायत्री का शब्दार्थ है प्राण का त्राण करने वाली । 'गय' कहते हैं प्राण को और 'त्री' कहते हैं त्राण करने वाली को । प्राण अर्थात् पुरुषार्थ । जब आन्तरिक साहस और व्यवहारिक परिश्रम का समन्वय उच्चस्तरीय उद्देश्यों के लिए जुट जाता है तो उस समन्वय के परिणाम हर क्षेत्र में चमत्कार जैसे दिखाई पड़ते हैं । पारस का महत्व इसलिए है कि वह लोहे की तुच्छता को सोने की महानता में बदल देता है । आत्मिक पारस पुरुषार्थ भी ठीक वही

भूमिका सम्पन्न करता है । गायत्री उपासना से जो प्रकाश मिलता और साहस जगता है उसे देखते हुए उस कायाकल्प को पारस की प्राप्ति कहा जाय तो उसमें अलंकारिकता तो है पर अत्युक्ति तनिक भी नहीं ।

परिष्कृत व्यक्तित्व को कल्प वृक्ष के समतुल्य माना गया है । कल्पवृक्ष स्वर्ग में है । कहा जाता है उसके नीचे बैठकर जो भी कामना की जाती है पूर्ण होती है । यह अलंकारिक रूप से परिष्कृत व्यक्तित्व का ही वर्णन है । गायत्री को सद्बुद्धि की देवी कहा गया है यदि उसकी वास्तविक रूप में साधना की जा सके तो ईश्वर के दरबार में साधक को वरदान मिलता है । इस वरदान का प्रथम प्रभाव परिष्कृत व्यक्तित्व के रूप में सामने आता है । जिसे इतनी सफलता मिल गई, समझना चाहिए उसे कल्प वृक्ष की छाया में बैठने और आप्तकाम होने का सौभाग्य मिल गया । देवता आप्तकाम कहलाते हैं, उनकी सभी कामनाएँ पूर्ण रहती हैं, उन्हें अभाव जन्य कभी कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ता । इसी स्थिति को कल्प वृक्ष की सिद्धि कहा गया है ।

मनुष्य जीवन की आवश्यकतायें बहुत स्वल्प हैं । उसका पेट छोटा और हाथ तथा मस्तिष्क का मिला जुला उत्पादन इतना अधिक है कि थोड़े से समय एवं श्रम से शारीरिक आवश्यकतायें सहज ही पूरी होती रह सकती हैं । 'औसत भारतीय' का निर्वाह स्तर स्वीकार हो और प्रस्तुत परिवार का उचित परिपोषण ही पर्याप्त माना जाय तो आवश्यक कामनाओं का बोझ सिर पर न चढ़ेगा और न उन्हें पूरा करने के लिए उचित-अनुचित रास्ते अपनाने एवं निरन्तर चिन्तित रहने की आवश्यकता पड़ेगी । यों आवश्यकतायें तो मानवीय पुरुषार्थ से अत्यन्त सरलता पूर्वक पूरी होती रहती हैं । निरर्थक कामनाऐं बढ़ाते चलना और उनको तुर्त-फुर्त पूरी करने के लिए व्याकुल रहना, यही है-मनोकामनाओं का जंजाल जिसके लिए अनपढ़ लोग निरन्तर आकुल-व्याकुल रहते और देवी देवताओं के सामने नाक रगड़ते देखे जाते हैं । देव बुद्धि के देवता लोग इस जंजाल से बचते हैं । सद्बुद्धि का आश्रय लेकर वे अपनी कामनाओं को सीमित करते हैं और जो उचित हैं उनकी पूर्ति प्रबल पुरुषार्थ के सहारे सरलता पूर्वक करते रहते हैं । ऐसी दशा में उनका आप्तकाम बने रहना, कल्पवृक्ष की छाया तले निवास करने जैसा आनन्द लेना सहज स्वाभाविक है । संक्षेप में सद्बुद्धि को ही कल्प वृक्ष समझा जाना चाहिए । गायत्री उपासना का मूल प्रयोजन वही हैं । उसका अनुग्रह जो जितनी मात्रा में प्राप्त कर लेता है वह उतनी मात्रा में पारस, अमृत और

कल्प वृक्ष के तीनों अध्यात्म लाभों को प्राप्त करके इसी धरती पर देव जीवन जीता और शरीर रहते ही स्वर्ग तथा मुक्ति का आनन्द प्राप्त करता है ।

गायत्री को आत्म शक्ति, ब्रह्मविद्या कहा गया है और उसको अमृत कलश से उपमा दी गई है ।आत्म–कल्याण और ईश्वर–दर्शन का अवलम्बन और मार्गदर्शन गायत्री मन्त्र में ओत–प्रोत है । उसे अपनाने वाले साधक अमृत पान करते हैं और देवताओं की तरह सच्चे अर्थों में अजर–अमर हो जाते हैं । गायत्री को अमृत कलश इसीलिए कहा गया है ।

गायत्री का चौथा नाम कामधेनु और पाँचवा ब्रह्मास्त्र है । कामधेनु अर्थात् माता की तरह परिपोषण करने वाली, प्रगति और समृद्धि के अजस्र वरदान देने वाली । ब्रह्मास्त्र अर्थात् वह अस्त्र जिसके प्रहार से पतन, संकट और विघ्न चूर–चूर होते चले जायें । जिसने सही रीति से गायत्री का अवलम्बन लिया है उसने अथर्ववेद की उस साक्षी ऋचा को अक्षरशः सही पाया है जिसमें उस महा शक्ति को दीर्घजीवन, प्राण, पराक्रम सुसंतति, सहयोगी परिवार, निर्मल यश, साधना वैभव तथा ब्रह्मवर्चस आत्मबल का वरदान बताया गया है ।

सद्ज्ञान की अधिष्ठात्री प्रत्यक्ष ऋतम्भरा प्रज्ञा गायत्री के २४ अक्षरों में मानवी चिन्तन और चरित्र को उच्चस्तरीय बनाये रहने वाला सार तत्व विद्यमान है । इस महाशक्ति की साधना में योगाभ्यास और तपश्चर्या के वे समस्त आधार, संकेत और विधान मौजूद हैं जिनके सहारे साधन कर्ता को ऋद्धि सिद्धियों का समुचित लाभ मिल सकता है । आत्मिक प्रगति की दोनों उच्च भूमिकायें स्वर्ग और मुक्ति को पाने के लिए गायत्री तत्वज्ञान का अवलम्बन अनुपम है । प्रत्येक धर्मपरायण को गायत्री का अवलम्बन आवश्यक ठहराया गया है । भारतीय धर्मानुसार नित्य उपासना का विधान "संध्या वन्दन" कहलाता है । संध्या विधान में गायत्री का स्थान वैसा ही है, जैसा कि शरीर में मेरुदण्ड का । भारतीय धर्म के दो प्रतीक चिन्ह हैं, एक शिखा, दूसरा सूत्र (यज्ञोपवीत) । ये दोनों ही गायत्री की प्रतिमायें हैं । शिर के ऊपर सर्वोच्च शिखर पर गायत्री की ज्ञान ध्वजा फहराने और कन्धे पर गायत्री के नौ शब्द, नौ धागे बनाकर, तीन व्याहृतियों को तीन ग्रंथियों का रूप देकर यज्ञोपवीत के रूप में कन्धे पर धारण करने का अनुशासन है । मस्तिष्क ज्ञान का और शरीर कर्म का आधार है । दोनों पर ही शिखा और सूत्र के रूप में गायत्री की प्रतिष्ठापना की गई है । अर्थात्

इन दोनों का उपयोग संचालन इन्हीं २४ अक्षरों में सन्निहित प्रेरणाओं के अनुरूप करने का निर्देश आर्ष ग्रंथों और आप्त वचनों में किया गया है । शास्त्रों में 'गुरु मन्त्र' नाम गायत्री को ही दिया गया है । विद्यारम्भ–वेदारम्भ–उपनयन आदि संस्कारों में गायत्री के आधार पर ही दीक्षा दी जाती है । अन्य मंत्रों को देव मन्त्र, साधना मन्त्र, सम्प्रदाय मन्त्र आदि तो कहा जा सकता है, पर अनादि 'गुरु मन्त्र' गायत्री को ही कहा गया है । भगवान राम को गुरु वशिष्ठ ने एवं भगवान कृष्ण को संदीपन ऋषि ने यही गुरु मन्त्र दिया था । महर्षि विश्वामित्र द्वारा राम को बला और अतिबला नामक शक्तियाँ इसी माध्यम से प्राप्त हुई थीं । स्वयं विश्वामित्र क्षत्रिय से ब्रह्मर्षि इसी के प्रभाव से बने थे ।

भगवान मनु का कथन है–गायत्री से बढ़कर पवित्र करने वाला और कोई मन्त्र नहीं है । जो मनुष्य नियमित रुप से तीन वर्ष तक गायत्री का जप करता है, वह ईश्वर को प्राप्त करता है । जो द्विज दोंनों संध्याओं में गायत्री जपता है वह वेद पढ़ने के फल को प्राप्त करता है । अन्य कोई साधना करे या न करे केवल गायत्री जप से ही सिद्धि पा सकता है । नित्य एक हजार जप करने वाला पापों से वैसे ही छूट जाता है जैसे केंचुली से सर्प छूट जाता है । जो द्विज गायत्री की उपासना नहीं करता वह निन्दा का पात्र है ।

शंख ऋषि का मत है–नरक रूपी समुद्र में गिरते हुए को हाथ पकड़ कर बचाने वाली गायत्री ही है । उससे उत्तम वस्तु स्वर्ग और पृथ्वी पर कोई नहीं है । गायत्री का ज्ञाता निस्संदेह स्वर्ग को प्राप्त करता है ।

महर्षि व्यास जी कहते हैं जिस प्रकार पुष्पों का सार शहद, दूध का सार घृत है, उसी प्रकार समस्त वेदों का सार गायत्री है । सिद्ध की हुई गायत्री कामधेनु के समान है । गंगा शरीर के पापों को निर्मल करती है । गायत्री रूपी ब्रह्म गंगा से आत्मा पवित्र होती है । जो गायत्री को छोड़कर अन्य उपासना करता है वह पकवान छोड़कर भिक्षा मांगने वाले के समान मूर्ख है । काम्य सफलता तथा तप की सिद्धि के लिए गायत्री से श्रेष्ठ और कुछ नहीं है ।

भारद्वाज ऋषि कहते हैं–ब्रह्मा आदि भी गायत्री का जप करते हैं । वह ब्रह्म साक्षात्कार कराने वाली है । अनुचित काम करने वालों के दुर्गुण गायत्री के कारण छूट जाते हैं ,गायत्री से रहित व्यक्ति शूद्र से भी अपवित्र है ।

नारदजी की उक्ति है–गायत्री भक्ति का ही रूप है, जहाँ भक्ति रूपा गायत्री है वहाँ श्री नारायण का निवास होने में कोई संदेह नहीं करना चाहिए ।

वशिष्ठ जी का मत है–मन्दमति, कुमार्गगामी, और अस्थिरमति भी गायत्री के प्रभाव से उच्च पद को प्राप्त करते हैं । फिर सद्गति होना निश्चित है । जो पवित्रता और स्थिरता पूर्वक गायत्री की उपासना करते हैं, वे आत्म लाभ करते हैं ।

गौतम ऋषि का मत है–योग का मूल आधार गायत्री है । गायत्री से ही सम्पूर्ण योगों की साधना होती है ।

महर्षि उद्दालक कहते हैं–गायत्री में परमात्मा का प्रचंड तेज भरा हुआ है । जो इस तेज को धारण करता है उसका वैभव अतुलनीय हो जाता है ।

देवगुरु बृहस्पति जी का मत है–देवत्व और अमृतत्व की आदि जननी गायत्री है । इसे प्राप्त करने के पश्चात् और कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता ।

श्रंगी ऋषि की उक्ति है–ज्ञान–विज्ञान का आदि श्रोत गायत्री ही है । उससे अधिक संसार में कुछ नहीं है ।

चरक ऋषि कहते हैं–जो ब्रह्मचर्य पूर्वक गायत्री की उपासना करता है और आँवले के ताजे फलों का सेवन करता है वह दीर्घजीवी होता है ।

योगिराज याज्ञवल्क्य कहते हैं–गायत्री और समस्त वेदों को तराजू में तोला गया । एक ओर षट् अंगों समेत वेद और दूसरी ओर गायत्री, तो गायत्री का पलड़ा भारी रहा । वेदों का सार उपनिषद् है, उपनिषद् का सार गायत्री को माना, व्याहृतियों समेत गायत्री । गायत्री वेदों की जननी, पापों का नाश करने वाली है, इससे अधिक पवित्र करने वाला अन्य कोई मंत्र स्वर्ग और पृथ्वी पर नहीं है । गंगा के समान कोइ तीर्थ नहीं, केशव से श्रेष्ठ कोई देव नहीं, गायत्री से श्रेष्ठ कोई मन्त्र न हुआ न आगे होगा । गायत्री जान लेने वाला समस्त विद्याओं का वेत्ता, श्रेय और श्रोत्रिय हो जाता है । जो द्विज गायत्री परायण नहीं वह वेदों का पारंगत होते हुए भी शूद्र के समान है, अन्यत्र किया हुआ उसका श्रम व्यर्थ है । जो गायत्री नहीं जानता ऐसा व्यक्ति ब्राह्मणत्व से च्युत और पाप युक्त हो जाता है ।

पाराशर जी कहते हैं–समस्त जप सूक्तों तथा वेद मन्त्रों में गायत्री मन्त्र सर्वश्रेष्ठ है । वेद और गायत्री की तुलना में गायत्री का पलड़ा भारी है ।

भक्ति पूर्वक गायत्री का जप करने वाला मुक्त होकर पवित्र बन जाता है । वेद, शास्त्र, पुराण, इतिहास पढ़ लेने पर भी जो गायत्री हीन है उसे ब्राह्मण नहीं समझना चाहिए ।

अत्रि मुनि कहते हैं–गायत्री आत्मा का परम शोधन करने वाली है । उसके प्रताप से कठिन दोष और दुर्गुणों का परिमार्जन हो जाता है । जो मनुष्य गायत्री तत्व को भली भाँति समझ लेता है उसके लिए इस संसार में कोई सुख शेष नहीं रह जाता ।

उपरोक्त अभिमतों से मिलते–जुलते अभिमत प्रायः सभी ऋषियों के हैं । इनसे स्पष्ट है कि कोई भी ऋषि अन्य विषयों में चाहे आपस का मतभेद रखते हों पर गायत्री के बारे में उन सब में समान श्रद्धा थी और वे सभी अपनी उपासना में उसका प्रथम स्थान रखते थे । शास्त्रों में, धर्म ग्रथों में, स्मृतियों में, पुराणों में गायत्री की महिमा तथा साधन पर प्रकाश डालने वाले सहस्रों श्लोक भरे पड़े हैं । इन सबका संग्रह किया जाय तो एक बड़ा गायत्री पुराण ही बन सकता है ।

वर्तमान शताब्दी के आध्यात्मिक महापुरुषों ने भी गायत्री के महत्व को उसी प्रकार स्वीकार किया है जैसा कि प्राचीनकाल के तत्वदर्शी ऋषियों ने किया था । आज का युग बुद्धि और तर्क का, प्रत्यक्षवाद का युग है ।

महात्मा गाँधी कहते हैं–"गायत्री मन्त्र का निरन्तर जप रोगियों को अच्छा करने और आत्माओं की उन्नति करने के लिए उपयोगी है । गायत्री का स्थिर चित्त और शान्त हृदय से किया हुआ जप आपत्तिकाल के संकटों को दूर करने का प्रभाव रखता है" ।

लोकमान्य तिलक कहा करते थे "जिस बहुमुखी दासता के बन्धनों में भारतीय प्रजा जकड़ी हुई है उसका अन्त राजनीतिक संघर्ष करने मात्र से न हो जायेगा । उसके लिए आत्मा के अन्दर प्रकाश उत्पन्न करना होगा । जिससे सत् और असत् का विवेक हो, कुमार्ग को छोड़ कर श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिले । गायत्री मन्त्र में यही भावना विद्यमान है ।"

महामना मदनमोहन मालवीय जी ने कहा था–"ऋषियों ने जो अमूल्य रत्न हमें दिये हैं उनमें से एक अनुपम रत्न गायत्री ऐसा है जिससे बुद्धि पवित्र होती है । ईश्वर का प्रकाश आत्मा में आता है । इस प्रकाश से असंख्य आत्माओं को भव वन्धनों से त्राण मिला है । गायत्री में ईश्वर

परायणता में श्रद्धा उत्पन्न करने की शक्ति है । साथ ही वह भौतिक अभावों को दूर करती है । जो ब्राह्मण गायत्री जप नहीं करता वह अपने कर्तव्य धर्म को छोड़ने का अपराधी होता है ।"

रवीन्द्र नाथ टैगोर कहते हैं–"भारतवर्ष को जगाने वाला जो मन्त्र है, वह इतना सरल है कि एक श्वाँस में उसका उच्चारण किया जा सकता है, वह है–गायत्री मन्त्र । उस पुनीत मन्त्र का अभ्यास करने में किसी प्रकार के तार्किक ऊहापोह, किसी प्रकार के मतभेद अथवा किसी प्रकार के बखेड़े की गुंजायश नहीं है ।"

योगी अरविन्द घोष ने कई जगह गायत्री जप करने का निर्देश किया है । उन्होंने बताया है कि गायत्री में ऐसी शक्ति सन्निहित है जो महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है । उन्होंने कइयों को साधना के तौर पर गायत्री का जप बताया है ।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस का उपदेश है–"मैं लोगों से कहता हूँ कि लम्बे साधन करने की उतनी जरूरत नहीं है । इस छोटी सी गायत्री की साधना करके देखो । गायत्री का जप करने से बड़ी–बड़ी सिद्धियाँ मिल जाती हैं । यह मन्त्र छोटा है पर इसकी शक्ति बड़ी भारी है ।"

स्वामी विवेकानन्द का कथन है–राजा से वही वस्तु माँगी जानी चाहिए जो उसके गौरव के अनुकूल हो । परमात्मा से माँगने योग्य वस्तु सद्बुद्धि है । जिस पर परमात्मा प्रसन्न होते हैं उसे सद्बुद्धि प्रदान करते हैं । सद्बुद्धि से सत् मार्ग पर प्रगति होती है और सत्कर्म से सब प्रकार के सुख मिलते हैं । जो सत् की ओर बढ़ रहा है उसे किसी प्रकार से सुख की कमी नहीं रहती । गायत्री सद्बुद्धि का मन्त्र है । इसलिए उसे मन्त्रों का मुकुटमणि कहा है ।'

जगद्गुरु शंकराचार्य जी का कथन है–"गायत्री की महिमा का वर्णन मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है । बुद्धि का होना इतना बड़ा कार्य है जिसकी समता संसार के और किसी काम से नहीं हो सकती । आत्म ज्ञान प्राप्त करने की दिव्य दृष्टि जिस बुद्धि से प्राप्त होती है, उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा होती है । गायत्री आदि मन्त्र है । उसका अवतार दुरितों को नष्ट करने और ऋत के अभिवर्धन के लिए हुआ है ।"

स्वामी रामतीर्थ ने कहा–"राम को प्राप्त करना सबसे बड़ा काम है । गायत्री का अभिप्राय बुद्धि को काम रुचि से हटा कर राम रुचि में लगा

देना है । जिसकी बुद्धि पवित्र होगी वही राम को प्राप्त कर सकेगा । गायत्री पुकारती है कि बुद्धि में उतनी पवित्रता होनी चाहिए कि वह राम को काम से बढ़कर समझे ।"

महर्षि रमण का उपदेश है–"योग–विद्या के अन्तर्गत मन्त्र विद्या बड़ी प्रबल है । मन्त्रों की शक्ति से अद्भुत सफलतायें मिलती हैं । गायत्री ऐसा मंत्र है, जिससे आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार के लाभ मिलते हैं ।"

स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं–"ब्रह्म मुहूर्त में गायत्री का जप करने से चित्त शुद्ध होता है और हृदय में निर्मलता आती है । शरीर निरोग रहता है, स्वभाव में नम्रता आती है, बुद्धि सूक्ष्म होने से दूर दर्शिता बढ़ती है और स्मरण शक्ति का विकास होता है । कठिन प्रसंगों में गायत्री द्वारा दैवी सहायता मिलती है । उसके द्वारा आत्म दर्शन हो सकता है ।"

दक्षिण भारत के प्रसिद्ध आत्मज्ञानी टी. सुब्बाराव कहते हैं–"सविता नारायण की दैवी प्रकृति को गायत्री कहते हैं । आदि शक्ति होने के कारण इसको गायत्री कहते हैं । गीता में इसका वर्णन 'आदित्य वर्ण' कहकर किया गया है । गायत्री की उपासना करना योग का सबसे प्रथम अंग है ।"

श्री स्वामी करपात्रीजी का कथन है–'जो गायत्री के अधिकारी हैं उन्हें नित्य नियमित रूप से जप करना चाहिए । द्विजों के लिए गायत्री का जप अत्यन्त आवश्यक धर्म कृत्य है ।

गीता धर्म के व्याख्याता श्री स्वामी विद्यानन्द जी कहते हैं–"गायत्री बुद्धि को पवित्र करती है । बुद्धि की पवित्रता से बढ़कर जीवन में दूसरा लाभ नहीं है, इसलिए गायत्री एक बहुत बड़े लाभ की जननी है ।"

सर राधाकृष्णन कहते हैं–"यदि हम इस सार्वभौमिक प्रार्थना गायत्री पर विचार करें तो हमें मालूम होगा कि यह वास्तव में कितना ठोस लाभ देती है । गायत्री हम में फिर से जीवन का श्रोत उत्पन्न करने वाली आकुल प्रार्थना है ।"

प्रसिद्ध आर्य–समाजी महात्मा सर्वदानन्द जी का कथन है–"गायत्री मन्त्र द्वारा प्रभु का पूजन सदा से आर्यों की रीति रही है । ऋषि दयानन्द ने भी उसी शैली का अनुसरण करके संध्या का विधान तथा वेदों के स्वाध्याय का प्रयत्न करना बताया है । ऐसा करने से अन्तःकरण की शुद्धि तथा बुद्धि निर्मल होकर मनुष्य का जीवन अपने तथा दूसरों के लिए हितकर हो जाता है । जितना ही इस कर्म में श्रद्धा और विश्वास हो उतना ही अविद्या आदि

क्लेशों का ह्रास होता है । जो जिज्ञासु गायत्री मन्त्र का प्रेम और नियम पूर्वक उच्चारण करते हैं, उनके लिए यह संसार सागर में तरने की नाव और आत्म प्राप्ति की सड़क है ।"

आर्य समाज के जन्मदाता श्री स्वामी दयानन्द जी गायत्री के श्रद्धालु उपासक थे । ग्वालियर के राजा साहब से स्वामी जी ने कहा कि भागवत्–सप्ताह की अपेक्षा गायत्री पुरश्चरण अधिक श्रेष्ठ है । उन्होंने जयपुर में सच्चिदानन्द, हीरालाल रावल, घोड़लसिंह आदि को गायत्री जप की विधि सिखाई थी । मुलतान में उपदेश के समय स्वामी जी ने गायत्री मन्त्र का उच्चारण किया और कहा कि यह मन्त्र सबसे श्रेष्ठ है । चारों वेदों का मूल यही गुरुमन्त्र है । आदि काल से सभी ऋषि मुनि इसी का जाप किया करते थे । स्वामी जी ने कई स्थानों पर गायत्री के अनुष्ठानों का आयोजन कराया था, जिसमें चालीस तक की संख्या में विद्वान ब्राह्मण बुलाये गये थे । यह जप पन्द्रह दिन तक चले थे ।

थियोसोफिकल सोसायटी के एक वरिष्ठ सदस्य प्रो. आर. श्रीनिवास का कथन है–"हिन्दू धार्मिक विचार धारा में गायत्री को सबसे अधिक शक्ति–शाली मन्त्र माना गया है । उसका अर्थ भी बड़ा दूरगामी और गूढ़ है । इस मन्त्र के अनेक अर्थ होते हैं और भिन्न–भिन्न प्रकार की चित्तवृत्ति वाले व्यक्तियों पर इसका प्रभाव भी भिन्न–भिन्न प्रकार का होता है । इसमें दृष्ट और अदृष्ट, उच्च और नीच, मानव और देव सबको किसी रहस्यमय तन्तु द्वारा एकत्रित कर लेने की शक्ति पाई जाती है । जब इस मन्त्र का अधिकारी व्यक्ति गायत्री के अर्थ और रहस्य को समझते हुए मन और हृदय को एकाग्र करके उसका शुद्ध उच्चारण करता है, तब उसका सम्बन्ध दृश्य सूर्य में अन्तर्निहित महान् चैतन्य शक्ति से स्थापित हो जाता है । वह मनुष्य कहीं भी मन्त्रोच्चारण करता हो पर उसके ऊपर तथा आस पास के वातावरण में विराट् 'आध्यात्मिक प्रभाव' उत्पन्न हो जाता है । यही प्रभाव एक महान् आध्यात्मिक आशीर्वाद है । इन्हीं कारणों से हमारे पूर्वजों ने गायत्री मन्त्र की अनुपम शक्ति के लिए उसकी स्तुतियाँ की हैं ।"

इन उपाख्यानों में वेद–उपनिषदों से लेकर मनीषियों तक ने एक स्वर से यह स्वीकार किया है कि व्यक्ति की अन्तः भूमिका को परिष्कृत कर उसे सुखी सम्मुन्नत बनाने के सारे तत्व गायत्री में विद्यमान हैं । एकांगी प्रगति कभी चिर स्थाई नहीं हो सकती । यह गायत्री महा मन्त्र की अद्वितीय विशेषता है । स्वार्थ

के साथ परमार्थ, लोक के साथ पारलौकिक कल्याण का योग ही परिपूर्ण कहा जा सकता है । यह सारी शिक्षायें गायत्री उपासना में सन्निहित हैं । व्यक्ति के उत्कर्ष के साथ-साथ सारे समाज और विश्व का अभ्युत्थान ही परमात्मा को अभीष्ट है, उस प्रक्रिया को गायत्री उपासना पूर्ण करती है ।

इस विश्व में दो शक्तियाँ काम करती हैं-एक चेतन दूसरी जड़ । जड़ पदार्थ देखने में स्थिर प्रतीत होते हैं, पर वस्तुतः उनमें भी उद्‌भुत क्रियाशीलता विद्यमान है ।

रेत, पर्वत, तालाब आदि को यों मोटी दृष्टि से स्थिर समझा जा सकता है, पर उनमें सृजन, अभिवर्धन और परिवर्तन का जो अनवरत क्रम चलता रहता है, उसे गम्भीरता पूर्वक देखने से प्रतीत होता है कि जीवधारी जिस प्रकार अपने विभिन्न प्रयोजनों में निरन्तर कुछ न कुछ सोचते और करते रहते हैं उसी प्रकार पदार्थ की दृश्य और अदृश्य गतिशीलता भी इस संसार को हलचल युक्त बनाये हुए है । अपनी पृथ्वी से लेकर असंख्य ग्रह नक्षत्रों तक सभी ब्रह्माण्डीय पिण्ड द्रुत गति से अपनी धुरी और कक्षा पर परिभ्रमण कर रहे हैं और अपनी आकर्षण शक्ति के द्वारा एक दूसरे के साथ बँधे-जकड़े हैं । इतना ही नहीं उनके अन्तः क्षेत्र में भी चित्र-विचित्र गति-विधियाँ अत्यन्त तीव्रगति से चलती रहती हैं । पदार्थ के साथ यह सक्रियता अविच्छिन्न रूप से जुड़ी होने के कारण ही उसका अस्तित्व बना हुआ है । पदार्थ की संरचना प्रचण्ड क्रियाशीलता के साथ हुई है । इसी के कारण वस्तुएँ स्वयमेव उपजती और बदलती रहती हैं । पदार्थ की इस क्रियाशीलता को अपरा प्रकृति कहा गया है ।

परमाणु पदार्थ की सबसे छोटी इकाई है, उसका संयुक्त और विराट रूप है ब्रह्माणु अथवा ब्रह्माण्ड । इस जड़ शक्ति का तो यत्किंचित विश्लेषण अध्ययन हुआ भी है पर चेतना का विवेचन उस तरह सम्भव नहीं है । परन्तु इस शक्ति के कारण ही कोई प्राणी जीवित दिखाई देता है । यों किसी भी प्राणी का शरीर कलेवर तो रासायनिक पदार्थों से ही बना होता है, पर उसकी अन्तः चेतना मौलिक है जो पदार्थ की शक्ति से उत्पन्न नहीं होती पर अपने प्रभाव से कलेवर को तथा समीपवर्ती वातावरण को प्रभावित करती है । इसे ही चेतना कहते हैं । चेतना के दो गुण हैं-एक इच्छा और दूसरा आस्था । इच्छा को भाव और विचारणा को बुद्धि कहते हैं । एक को अन्तरात्मा तथा दूसरे को मस्तिष्क कहा जा सकता है । मस्तिष्क जो सोचता है उसके मूल में

आवास, आस्था, विवेचना एवं विचारणा की सम्मिलित प्रेरणा ही काम करती है । अजीव चेतना को परा प्रकृति कहते हैं ।

जड़ पदार्थों के विवेचन विश्लेषण करने वाले विज्ञान को भौतिक विज्ञान कहते हैं और चेतना का विवेचन–अध्ययन प्रस्तुत करने वाले विज्ञान को अध्यात्म विज्ञान कहा जा सकता हैं । गायत्री आध्यात्मिक और भौतिक दोनों ही प्रकार की सूक्ष्म शक्तियों से ओत–प्रोत है । कहा जा चुका है कि परमाणु पदार्थ का सबसे छोटा घटक है । उसका संयुक्त रूप ही ब्रह्माण्ड है । व्यष्टि और समष्टि के नाम से भी इस लघुता और विशालता को जाना जा सकता है । जीवाणु की चेतन सत्ता आत्मा कहलाती है और उसकी समष्टि विश्वात्मा अथवा परमात्मा । ब्रह्माण्ड में भरी क्रियाशीलता से परमाणु प्रभावित होता है । इस बात को यों भी कह सकते हैं कि परमाणुओं की संयुक्त चेतना ब्रह्माण्ड व्यापी हलचलों का निर्माण करती है । इस प्रकार चेतना के क्षेत्र में इसी तथ्य को परमात्मा द्वारा आत्मा को अनुदान मिलना अथवा आत्माओं की संयुक्त चेतना के रूप में परमात्मा का विनिर्मित होना कुछ भी कहा जा सकता है ।

गायत्री को परा और अपरा दोनों ही प्रकृतियों का उद्गम कहा जा सकता है । आध्यात्मिक क्षेत्रों में वह प्रधानतः ब्रह्म तेज के रूप में परिलक्षित होती है, वह परमब्रह्म–परमात्मा का प्रकट स्वरूप है । वह साधक को ब्रह्म निर्वाण पद तक सुविधा पूर्वक पहुँचाती है । देवी भागवत पुराण में इस बात को स्पष्ट कर दिया गया है –

परब्रह्मस्वरूपा च निर्वाणपददायिनी ।
ब्रह्म तेजोमयी शक्ति साअधिष्ठातृ देवता ।।

अर्थात्–गायत्री परब्रह्मस्वरूप तथा निर्वाण पद देने वाली है । वह ब्रह्म तेज शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है ।

गायत्री क्या है ? इस ब्रह्माण्ड में व्याप्त उस चेतना मान सरोवर को गायत्री कह सकते हैं जो प्राणियों में ज्ञान संवेदना और पदार्थों में सृजन परिवर्तन वाली क्रियाशीलता बनकर काम करती है । इसे ब्रह्म चेतना से उद्भूत माना गया है ।

सृष्टि का विकास और विस्तार एक ही केन्द्र बिन्दु से हुआ है, यह बात प्रकारान्तर से पश्चिमी विद्वान और भारतीय दार्शनिक दोनों ही मानते हैं । खगोल शास्त्रियों के मत में भी यह प्रारम्भ में एक ही महत् तत्व था, उसमें विस्फोट

हुआ और तब से पदार्थ मन्दाकिनियों के रूप में बहना प्रारम्भ हुआ जिससे ग्रह–नक्षत्रों वाली सृष्टि की संरचना हुई । इस भौतिकवादी मान्यता में पदार्थ के लिए स्थान तो है पर चेतना के लिए न होने से अपूर्ण जैसा है ।

भारतीय मनीषियों की गवेषणाऐं इससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं । हमारे यहाँ की भी मान्यता यही है कि प्रारम्भ में एक मात्र सत्–तत्व वाली ब्राह्मी चेतना ही थी । उसके नाभि देश से स्फुरण हुई "एकोऽहं बहुस्याम"– मैं एक हूँ बहुत हो जाऊँ । उनकी यह इच्छा ही शक्ति बन गई और विश्व व्यवस्थापिका महाप्रकृति कहलाई, उसी को गायत्री कहते हैं । आध्यात्मिक भाषा में यह शक्ति सत्, रज, तम तीन शक्तियों में विभक्त होती है । गायत्री महाविज्ञान में उन्हें ही गायत्री की "ह्रीं" अर्थात् ज्ञान शक्ति या सरस्वती रूप 'श्रीं" अर्थात् साधना या लक्ष्मी–रूप, 'क्लीं' शक्ति प्रधान अर्थात् काली रूप कहा गया है । परमेश्वर और प्रकृति के संयोग से मिश्रित रज सत्ता उत्पन्न हुई 'वही' जीव कहलाई, जिस तरह पुत्र में माँ और पिता दोनों के ही युग्म सूत्र (क्रोमोसोम) विद्यमान रहते हैं उसी तरह जीव सत्ता में अपने पिता और माता दोनों की सत्ता विद्यमान रहती है । बालक अधिकांश जीवन अपनी माँ के सहारे व्यतीत करता है, वह उसकी प्रकृति के अधिक अनुकूल पड़ती है । इस तथ्य को भारतीय तत्वदर्शियों ने बहुत गम्भीरता से अनुभव किया था । इसीलिए गायत्री उपासना को इतना महत्व दिया गया । उसमें भक्ति और कर्म, ज्ञान और वैराग्य सभी का समन्वय होने से गायत्री तत्व–ज्ञान लोक परलोक दोनों में ही सहायक होता है ।

सूक्ष्म प्रकृति वह है जो आद्य शक्ति गायत्री से उत्पन्न होकर सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा में बँटती है । सर्व व्यापी शक्ति–निर्झरिणी पंच तत्वों से कहीं अधिक सूक्ष्म है । जैसे नदियों के प्रवाह में जल की लहरों का वायु के आघात होने के कारण 'कलकल' से मिलती जुलती ध्वनियाँ उठा करती हैं । वैसे ही सूक्ष्म प्रकृति की शक्ति धाराओं से तीन प्रकार की शब्द ध्वनियाँ उठती हैं । सत् प्रवाह में 'ह्रीं', रज प्रवाह में 'श्रीं' और तम प्रवाह में 'क्लीं' शब्द से मिलती जुलती ध्वनि उत्पन्न होती है । उससे भी सूक्ष्म ब्रह्म का ॐकार ध्वनि प्रवाह है । नाद योग की साधना करने वाले ध्यान मग्न होकर इन ध्वनियों को पकड़ते हैं, उनका सहारा पकड़ते हुए ब्रह्म सायुज्य तक आ पहुचते हैं ।

प्राचीन काल में हमारे पूजनीय पूर्वजों ने–ऋषि–मुनियों ने अपनी सुतीक्ष्ण दृष्टि से विज्ञान के इस सूक्ष्म तत्व को पकड़ा था, उसी की शोध और

सफलता में अपनी हस्तियों को लगाया था । फलस्वरूप वे वर्तमान काल के यशस्वी भौतिक विज्ञान की अपेक्षा अनेक गुने लाभों से लाभान्वित होने में समर्थ हुए थे । वे आदि शक्ति के सूक्ष्म प्रवाहों पर अपना अधिकार स्थापित करते थे । यह प्रकट तथ्य है कि मनुष्य के शरीर से अनेक प्रकार की शक्तियों का आविर्भाव होता है । हमारे ऋषिगण योग द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों में छिपे पड़े हुए शक्ति केन्द्रों को, चक्रों को, ग्रंथियों को, मातृकाओं को, ज्योतियों को, भ्रमरों को जगाते थे और उस जागरण से जो प्रवाह उत्पन्न होता था, उसे आद्य शक्ति के विभिन्न प्रवाहों में से जिनके साथ आवश्यकता होती थी, उनके साथ सम्बन्धित कर देते थे । जैसे रेडियो का स्टेशन के ट्रान्समीटर यन्त्र से सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाता है तो दोनों की विद्युत शक्तियाँ सम श्रेणी की होने के कारण आपस में सम्बन्धित हो जाती हैं तथा उन स्टेशनों के बीच आपसी वार्तालाप का, सम्वादों के आदान प्रदान का सिलसिला चल पड़ता है । इसी प्रकार साधना द्वारा शरीर के अन्तर्गत छिपे हुए और तन्द्रित पड़े हुए केन्द्रों का जागरण करके सूक्ष्म प्रकृति के शक्ति प्रवाहों से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो मनुष्य और आद्य शक्ति आपस में सम्बन्धित हो जाते हैं । इस सम्बन्ध के कारण मनुष्य उस आद्य शक्ति के गर्भ में भरे हुए रहस्यों को समझने लगता है और अपनी इच्छानुसार उसका उपयोग करके लाभान्वित हो सकता है । चूँकि संसार में जो कुछ है वह सब उस आद्य शक्ति के भीतर है इसलिए वह सम्बन्धित शक्ति भी संसार के सब पदार्थों और साधनों से सम्बन्ध स्थापित कर सकती है ।

वर्तमान काल के वैज्ञानिक पंचतत्वों की सीमा तक सीमित स्थूल प्रकृति के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बड़ी-बड़ी कीमती मशीनों का, विद्युत, वाष्प, गैस, पेट्रोल आदि का प्रयोग करके कुछ आविष्कार करते हैं और थोड़ा सा लाभ उठाते हैं । यह तरीका बड़ा श्रम-साध्य, धनसाध्य और समय साध्य है । उसमें खराबी, टूट-फूट और परिवर्तन की खटपट भी आये दिन लगी रहती है । उन यन्त्रों की स्थापना, सुरक्षा और निर्माण के लिए हर समय काम जारी रखना पड़ता है तथा उनका स्थान परिवर्तन तो और भी कठिन होता है । यह सब झंझट भारतीय योग विज्ञान के विज्ञान वेत्ताओं के सामने नहीं थे । वे बिना किसी यन्त्र की सहायता के तथा बिना संचालक, पेट्रोल आदि के, केवल अपने शरीर के शक्ति केन्द्रों का सम्बन्ध सूक्ष्म प्रकृति

से स्थापित करके ऐसे आश्चर्यजनक कार्य कर लेते थे, जिनकी सम्भावना तक को आज के भौतिक विज्ञानी समझने में समर्थ नहीं हो पा रहे हैं ।

इन उपलब्धियों का आधार है साधना । व्यक्ति साधना द्वारा अपनी पात्रता का विकास करता हुआ उस महाशक्ति से लाभान्वित हो सकता है । यह महाशक्ति सत्, रज और तम इन तीनों प्रकृतियों को प्रमाणित कर मनुष्य जीवन में ज्ञान, क्रिया और आराधना के रूप में प्रकट होती है तथा उपासक को ज्ञानवान, क्रियाशील और धनवान बना देती है ।

गायत्री साधना द्वारा जो व्यक्ति आत्मिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के लिए प्रयत्न करते हैं वे अपनी अन्तर्निहित क्षमताओं को जागृत कर उन पर अधिकार प्राप्त कर उन्हें वैसा ही उपयोगी बना लेते हैं; जैसे बिजली, एटम, भाप आदि की शक्तियों पर अधिकार प्राप्त करके आज के वैज्ञानिकों ने उन्हें मनुष्य की सेवा में प्रयुक्त कर दिया है । भौतिक जगत में जो शक्ति भौतिक सम्पन्न दिखाई पड़ती है वही अर्न्तजगत में आध्यात्मिक क्षमता के रूप में प्रकट होती है । गायत्री की आध्यात्मिक शक्ति साधक के सामने वैसे ही सौभाग्य कहे जाने जैसे अवसर प्रस्तुत करती है ।

गायत्री उपासना का छुटपुट लाभ कोई भी उठा सकता है । सकाम उपासनायें, बीज मन्त्रों का प्रभाव, अनुष्ठान एवं पुरश्चरणों की श्रृंखला अपने ढंग के लाभ प्रदान करती रहती है, उनके द्वारा साधक के छुटपुट कष्ट दूर होने एवं अभीष्ट सफलतायें प्राप्त होने का क्रम चलता रहता है । ऐसे लाभ और चमत्कार आये दिन देखने को मिलते रहते हैं, पर यह हैं छोटे स्तर की वस्तुएँ । अमुक कष्ट को दूर करलेना या अमुक सफलता को प्राप्त कर लेना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है । ऐसा लाभ तो भौतिक प्रयत्नों से भी प्राप्त किया जा सकता है । उपासना का लाभ तो अन्तरात्मा को अनन्त सामर्थ्य से भर देना और चन्दन के वृक्ष की तरह स्वयं ही सुगन्धित होने के साथ-साथ समीपवर्ती झाड़-झंखाड़ों को भी अपने ही समान सुरभित कर देना है । ऐसा उच्च स्तरीय लाभ प्राप्त करने के लिए मनुष्य को ब्राह्मणत्व के अनुरूप गुण, कर्म, स्वभाव अपने में उत्पन्न करने पड़ते हैं । तभी वह खजाना मिलता है, जिसके लिए ब्रह्म विद्या ने ब्राह्मण का उद्‌बोधन करते हुए उसे उस महान भाण्डागार को हस्तगत कर लेने की प्रेरणा दी है ।

गायत्री के महामन्त्र में जिन देव शक्तियों का समावेश है वे सत्पात्र पर ही अवतरित होती हैं । स्वर्ग से उतर कर गंगा पृथ्वी पर आई तो उनके धारण करने के लिए शिवजी को अपनी जटाएँ फैलाकर अवतरण की

पृष्ठभूमि तैयार करनी पड़ी थी । भागीरथ के तप से प्रसन्न हो कर गंगा ने पृथ्वी पर उतरने का वरदान तो दिया था पर साथ ही यह भी कह दिया था कि यदि मेरी धारा को संभालने वाली भूमिका न बनी तो धारा पृथ्वी में छेद करती हुई पाताल को चली जायगी, उसका लाभ भू लोक वासियों को न मिल सकेगा । इस आवश्यकता की पूर्ति जब भगवान शंकर ने कर दी तभी गंगा अवतरण संभव हो सका । गायत्री महाशक्ति की भी ठीक यही स्थिति है । उसे धारण करने के लिए समर्थ पृष्ठभूमि की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है और इस आवश्यकता की पूर्ति ब्राह्मणत्व के गुण, कर्म, स्वभाव से सम्पन्न साधक ही कर सकता है । ऐसा ब्राह्मण मन्त्र की महाशक्ति को अपने में धारण कर सकता है । कहा भी है–

दैवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीनाश्च देवताः ।
ते मन्त्रा ब्राह्मणाधीनास्तत्स्याद् विप्रोहि देवता ।।

–मत्स्य पुराण

देवताओं के आधीन सब संसार है । वे देवता मन्त्रों के आधीन हैं । वे मन्त्र ब्राह्मण द्वारा प्रयुक्त होते हैं, इसलिए ब्राह्मण भी देवता हैं ।

महर्षि वशिष्ठ इसी प्रकार के सुर–पृथ्वी के देवता थे । उनके पास नन्दनी कामधेनु–अर्थात् गायत्री की महाशक्ति थी । राजा विश्वामित्र के साथ जब वशिष्ठ का युद्ध हुआ और राजा की विशाल सेना परास्त हो गई तो विश्वामित्र के मुख से यही निकला–"धिग् बलं क्षत्रिय बलं–ब्रह्म तेजो बलम्–बलम्" अर्थात् भौतिक बल धिक्कारने योग्य, तुच्छ एवं नगण्य है । वास्तविक बल तो ब्रह्मबल ही है । वही मन्त्र बल है, वही सच्चा बल है । यह कहते हुए विश्वामित्र ने राजपाट का परित्याग कर दिया और ब्रह्मबल प्राप्त करने के लिए तप करने लगे ।

गायत्री ब्रह्म–शक्ति के स्वरूप, क्रिया–कलाप एवं उपयोग को शास्त्रों में अनेक उदाहरणों के साथ बताया गया है । कहीं तो उस शक्ति ने स्वयं ही अपने स्वरूप का परिचय दिया है और कहीं देवताओं ने अथवा ऋषियों ने स्तवन के रूप में उसके स्वरूप का गुणगान सहित वर्णन किया है । इन वर्णनों के आधार पर यह जाना जा सकता है कि गायत्री शक्ति तत्व का इस संसार में कहाँ, किस प्रकार उपयोग हो रहा है ?

गायत्री परदेवतेति कथिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी ।

यह गायत्री सबसे परा देवता है । ऐसा कहा गया है । यह चित् स्वरूप वाली साक्षात् ब्रह्म ही हैं ।

गायत्री तु परं तत्वं गायत्री परमागतिः । —वृहद् पाराशर ५।४

गायत्री ही परम तत्व है । गायत्री ही परम गति है ।

गायत्री सा महेशानी परब्रह्मात्मिका मता ।

—रुद्रतन्त्र

यह गायत्री ही परब्रह्मात्मिका और महेश्वरी है ।

गायत्री परदेवतेति कथिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी ।

—गायत्री पुरश्चरण पद्धति

परा देवता, चित् रूपणी एवं साक्षात् ब्रह्म गायत्री ही है ।

तदक्षरं तत्सवितुर्वरेण्यं प्रज्ञा च तस्याः प्रसृता परा सा ।

—गुह्योपनिषद्

वही अक्षर ब्रह्म है । वह तत्सवितुर्वरेण्यं प्रज्ञा है । सुविस्तृत परा शक्ति है ।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तै देव्यै नमो नमः।।

—मार्कण्डेय पुर।ग

जो महाशक्ति सम्पूर्ण प्राणियों में शक्ति रूप विद्यमान है, इन्द्रियों की अधिष्ठात्री देवी है एवं पंच तत्वों की संचालिका है उसे बार—बार नमस्कार ।

गायत्री वा इदं सर्व भूतं यदिदं किं च वाग्वै गायत्री वाग्वा इदं सर्वं भूतं गायति च त्रायते च ।

या वै सा गायत्रीयं वाव सा येयं पृथिव्यस्यां हीदं सर्वं भूतं प्रतिष्ठितमेतामेव नातिशीयते ।

——छान्दोग्य३।१२।१।२

गायत्री समस्त पंचभूतों में व्याप्त है । जो कुछ यहाँ है सो सब गायत्री ही है । यह वाणी ही वर्णन और रक्षण करती है । यह पृथ्वी गायत्री है जिसमें सम्पूर्ण प्राणी रहते हैं ।

सैषा चतुष्पदा षड्विधा गायत्री तदेतदृचाभ्यनूक्तम । एतावानस्य महिमा ततो ज्यायांश्च पूरूषाः । पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवीति ।

—छान्दोग्य ३।१२।५

यह गायत्री चार पद वाली और छै भेदों वाली है । इस गायत्री की अविच्छिन्न महिमा है । यह तीन पद वाला परम् पुरूष अमृत और प्रकाश बनकर आत्मा में स्थित हो । इसका एक पद सन्तोष विश्व है ।

गायत्री की चेतनात्मक धारा सद्बुद्धि के ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में काम करती है और जहाँ उनका निवास होता है वहाँ ब्राह्मणत्व एवं देवत्व का अनुदान बरसता चला जाता है, साथ ही आत्मबल के साथ जुड़ी हुई दिव्य विभूतियाँ भी उस व्यक्ति में बढ़ती जाती हैं ।

गायत्री को ब्राह्मण का मन्त्र कहा जाता है, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि ब्राह्मण बिरादरी के अतिरिक्त दूसरी बिरादरी वाले उसकी साधना नहीं कर सकते, वरन् इसका तात्पर्य यह है कि जो इस महा शक्ति का परिपूर्ण लाभ उठाना चाहें उन्हें जप–तप ही नहीं अपने व्यावहारिक जीवन में ब्राह्मणत्व का अवतरण भी करना चाहिए । चरित्र जितना शुद्ध होगा यह महामन्त्र उतना ही प्रखर लाभ पहुँचायेगा । चरित्रवान व्यक्ति की थोड़ी सी उपासना भी इतना अद्भुत लाभ दिखाती है, जितनी कि दुश्चरित्र व्यक्ति के आजीवन क्रियाकृत्य भी नहीं कर सकते । ब्राह्मणत्व यदि अपने भीतर पैदा कर लिया जाय तो गायत्री उपासना के जो लाभ शास्त्रकारों ने बताये हैं उनकी सत्यता अक्षरशः प्रत्यक्ष की जा सकती है ।

गायत्री जप के कितने महत्वपूर्ण लाभ हैं, इसका आभास निम्नलिखित थोड़े से प्रमाणों से जाना जा सकता है –

सर्वेषां वेदानां गुह्योपनिषत्सारभूतां ततो गायत्रीं जपेत् ।

–छान्दोग्य परिशिष्टम्

'गायत्री' समस्त वेदों और गुह्य उपनिषदों का सार है, इसलिए गायत्री मन्त्र का नित्य जप करें ।

सर्ववेदसारभूतगायत्र्यास्तु समर्चना ।
ब्रह्मादयोपि संध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च ।।

–दे. भा. स्क. १६ अ. १६।१५

गायत्री मन्त्र की अराधना समस्त वेदों का सारभूत है । ब्रह्मादि देवता भी सन्ध्या काल में गायत्री का ध्यान करते हैं और जप करते हैं ।

गायत्रीमात्र निष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात् ।

–दे. भा. स्क. १६अ. ८।९०

गायत्री मन्त्र की उपासना करने वाला ब्राह्मण भी मोक्ष को प्राप्त होता है ।

ऐहिकामुष्किकं सर्वं गायत्री जपतो भवेत् ।

—अग्नि पुराण

गायत्री जपने वाले को सांसारिक और पारलौकिक समस्त सुख प्राप्त हो जाते हैं ।

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः ।
स ब्रह्म परमभ्येति वायुभूतः इवमूर्तिमान् ।।

—मनुस्मृति

जो मनुष्य तीन वर्ष तक प्रतिदिन गायत्री मन्त्र जपता है वह अवश्य ब्रह्म को प्राप्त करता है और वायु के समान स्वेछा गमन वाला होता है ।

कुर्यादन्यन्न वा कुर्यात् इति प्राह मनुः स्वयम् ।
अक्षयमोक्षमवाप्नोति गायत्रीमात्रजापनात् ।।

—शौनक

इस प्रकार मनु जी ने स्वयं कहा है कि अन्य देवताओं की उपासना करे या न करे केवल गायत्री के जप से द्विज अक्षय मोक्ष को प्राप्त होता है ।

ओंकार संहिता जपन् तां च व्याहृतिपूर्वकम् ।
संध्ययोर्वेदविद्विप्रो वेद-पुण्येन मुच्यते ।।

—मनुस्मृति अ. २।७८

जो ब्राह्मण दोनों संध्याओं में प्रणव व्याहृति सहित गायत्री मन्त्र का जप करता है, वह वेदों के पढ़ने के फल को प्राप्त करता है ।

गायत्रीं जपते यस्तु द्विकालं ब्राह्मणः सदा ।
असत्प्रगृहीतोपि स याति परमां गतिम् ।।

—अग्निपुराण

जो ब्राह्मण सदा सायंकाल और प्रातःकाल गायत्री का जप करता है वह ब्राह्मण अयोग्य प्रतिग्रह लेने पर भी परमगति को प्राप्त होता है ।

सकृदपि जपेद्विद्वान् गायत्रीं परमाक्षरीम् ।
तत्क्षणात् संभवेत्सिद्धिर्ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ।।

—गायत्री पुरश्चरण २८

श्रेष्ठ अक्षरों वाली गायत्री को विद्वान यदि एक बार भी जपे तो तत्क्षण सिद्धि होती है और वह ब्रह्म की सायुज्यता को प्राप्त करता है ।

जप्येनैव तु संसिद्धयेत् ब्राह्मणो नात्र संशयः ।
कुर्यादन्यत्र वा कुर्यान्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते ।। —मनु.९७

ब्राह्मण अन्य कुछ करे या न करे, परन्तु वह केवल गायत्री से ही सिद्धि पा सकता है ।

नास्ति गंगा समं तीर्थ न देवः केशवात्परः ।
गायत्र्यास्तु परं जापं न भूतं न भविष्यति ।।

–वृ. यो. याज्ञ. अ. १०२–७९

गंगाजी के समान कोई तीर्थ नहीं है, केशव से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं है । गायत्री मन्त्र के जप से श्रेष्ठ कोई जप न आज तक हुआ और न होगा ।

सर्वेषांजपसूक्तानामृचश्च यजुषां तथा ।
साम्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः ।।

–वृ. पाराशर स्मृति अ. ४।४

समस्त जप सूक्तों में, ऋक, यजु और सामवेदों में तथा एकाक्षरादि मन्त्रों में गायत्री मन्त्र का जप परम श्रेष्ठ है ।

यथा मधु च पुष्पेभ्यो घृतं दुग्धाद्रसात्पयः ।
एवं हि सर्ववेदना गायत्री सार उच्यते ।। –व्यास

जिस प्रकार पुष्पों का सारभूत मधु, दूध का घृत, रसों का सारभूत पय है, उसी प्रकार गायत्री मन्त्र समस्त वेदों का सार है ।

तदित्यृचाः समो नास्ति मन्त्रो वेदचतुष्टये ।
सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च ।।
समानि कलया प्राहुर्मुनयो न तदित्यृचा ।।

–विश्वामित्र

गायत्री मन्त्र के समान मन्त्र चारों वेदों में नहीं है । सम्पूर्ण वेद, यज्ञ, दान, तप, गायत्री मन्त्र की एक कला के समान भी नहीं है, ऐसा मुनि लोग कहते हैं ।

सोमादित्यान्वयाः सर्वे राघवाः कुरवस्तथा ।
पठन्ति शुचयो नित्यं सावित्रीं परमां गतिम् ।।

–महाभारत अनु. पर्व अ. १५।७८

हे युधिष्ठिर ! सम्पूर्ण चन्द्रवंशी, सूर्यवंशी, रघुवंशी तथा कुरुवंशी नित्य ही पवित्र होकर परमगति दायक गायत्री मन्त्र का जाप करते हैं ।

एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामः परन्तपः ।
सावित्र्यास्तु परन्नास्ति पावनं परमं स्मृतम् ।।

–मनुस्मृति अ. २।८३

एकाक्षर अर्थात् 'ॐ' परब्रह्म है । प्राणायाम परम तप है और गायत्री मन्त्र से बढ़कर पवित्र करने वाला कोई भी मन्त्र नहीं है ।

गायत्र्याः परमं नास्ति दिवि चेह न पावनम् ।
हस्तत्राणप्रदादेवी पततां नरकार्णवे ।।

–शंख स्मृति अ. २।८३

नरक रूपी समुद्र में गिरते हुए को हाथ पकड़कर बचाने वाली गायत्री के समान पवित्र करने वाली वस्तु या मन्त्र पृथ्वी पर तथा स्वर्ग में भी नहीं है ।

गायत्री संहिता में भी कहा गया है –

यथा पूर्वस्थितञ्चैव न द्रव्यं कार्य–साधकम् ।
महासाधनतोऽप्यस्मान्नाज्ञो लाभं तथाप्नुते ।।८०।।

जिस प्रकार धन पास में रहने से ही कार्य सिद्ध नहीं हो जाता, उसी प्रकार से मूर्ख मनुष्य इस महा साधन से लाभ प्राप्त नहीं कर सकता ।

साधकः कुरूते यस्तु तन्त्रशक्तेरपव्ययः ।
तं विनाशयति सैव समूलं नात्र संशयः ।।८१।।

जो साधक मन्त्र शक्ति का दुरुपयोग करता है उसको वह शक्ति ही समूल नष्ट कर देती है ।

सततं साधनाभिर्यो याति साधकतां नरः ।
स्वप्नावस्थासु जायन्ते तस्य दिव्यानुभूतयः ।।८२।।

जो मनुष्य निरन्तर साधना करने से साधकत्व को प्राप्त हो जाता है उस व्यक्ति में स्वप्नावस्था में दिव्य अनुभव होते हैं ।

सफलः साधको लोके प्राप्नुतेऽनुभवान् नवान् ।
विचित्रान् विविधाश्चैव साधुनासिद्धयनन्तरम् ।।८३।।

संसार में सफल साधक नवीन और विचित्र प्रकार के विविध अनुभव को साधना की सिद्धि के पश्चात् प्राप्त करता है ।

भिन्नाभिर्विधिभि बुद्धया भिन्नासु कार्यपंक्तिसु ।
गायत्र्याः सिद्धिमन्त्रस्य प्रयोगः क्रियते बुधैः ।।८४।।

बुद्धिमान् पुरुष भिन्न–भिन्न कार्यों में गायत्री के सिद्ध हुए मन्त्र का प्रयोग भिन्न–भिन्न विधि से विवेक पूर्वक करता है ।

इस प्रकार शास्त्रों में गायत्री मन्त्र से होने वाले अनेक लाभों का विवरण कई स्थानों पर मिलता है । यह अनायास या गुणानुवाद ही नहीं है । मन्त्रों के माध्यम से सिद्धि और भौतिक तथा आध्यात्मिक लाभ विज्ञान

सम्मत है । अगले पृष्ठों पर हम देखेंगे कि मन्त्रों के माध्यम से विश्वव्यापी ब्रह्माण्ड चेतना की शक्ति से किस प्रकार लाभ मिलता है ।

त्रिदेवों की परम उपास्य
गायत्री महाशक्ति

गायत्री परब्रह्म की मूलभूत एवं अविच्छिन्न शक्ति है । वह कोई स्वतंत्र देवी–देवता नहीं अपितु परब्रह्म परमात्मा का क्रिया भाग है । ब्रह्म निर्विकार, अचिन्त्य बुद्धि से परे है, साक्षी रूप है परन्तु अपनी उसकी क्रियाशील चेतना शक्ति रूप में होने के कारण वह उपासनीय है और उस उपासना का अभीष्ट परिणाम भी प्राप्त होता है ।

भारतीय अध्यात्मशास्त्र में अनेक देवी देवताओं की चर्चा है । उनके भिन्न–भिन्न स्वरूप और अलग–अलग आकार–प्रकारों का उल्लेख आता है । यह सभी देवी–देवता परब्रह्म की शक्तियों के विभिन्न रूप हैं । जिस प्रकार जिह्वा में वाणी, नेत्रों में दृष्टि, मस्तिष्क में बुद्धि, भुजाओं में बल, पैरों में गति होती है उसी प्रकार परब्रह्म की अगणित शक्तियाँ पृथक–पृथक देवताओं के नाम से कही गयी हैं । यों उन्हें सशक्त बनाने के लिए पृथक अवयवों के अलग–अलग व्यायाम भी किये जाते हैं, पर वास्तविकता को समझने वाले शरीर की मूल जीवनी शक्ति, पाचन क्रिया, रक्त शुद्धता आदि पर ही ध्यान केन्द्रित करते हैं, क्योंकि जड़ को सींचने से सभी पत्तियाँ, डालियाँ स्वयमेव हरी रह सकती हैं । देवताओं का पृथक–पृथक पूजन भी उपयोगी है, उसमें कुछ हानि नहीं, पर दूरदर्शी जड़ सींचने की तरह मूलशक्ति पर ही ध्यान केन्द्रित करते हैं और पृथक–पृथक दीखने वाले सभी अवयवों को सशक्त परिपुष्ट बनाते हुए उनके द्वारा प्राप्त हो सकने वाले लाभों से लाभान्वित होते हैं ।

समस्त देव शक्तियों का जो उत्स है वह ब्राह्मी शक्ति ही है और उसी ब्राह्मी शक्ति को गायत्री कहते हैं । ब्रह्म तत्व में ब्राह्मी शक्ति गायत्री ही गतिशीलता उत्पन्न करती है । उसी से अन्य सब अंश–अवयवों को, देवताओं को पोषण मिलता है । इसलिए तत्वदर्शी जगह–जगह भटकने की अपेक्षा एक ही प्रमुख आश्रय का अवलंबन करते हैं । जो दर–दर भटकने पर मिल सकता है, उसे एक ही स्थान पर प्राप्त कर लेते हैं । अन्यान्य देवताओं की पूजा–अर्चना से जो आंशिक लाभ मिल सकते हैं, उनकी अपेक्षा अनेक गुना लाभ मूल शक्ति की उपासना का है । गायत्री मूल है । देव शक्तियाँ उसकी

शाखा उपशाखा मात्र हैं । वे शक्तियाँ भी अपनी समर्थता मूल केन्द्र से ही उपलब्ध करके इस योग्य बनाती हैं कि अपना क्रिया–कलाप विधिवत जारी रख सकें, किसी साधक को अभीष्ट वरदान दे सकें । इस तथ्य का पुराणों तथा साधना शास्त्रों में इस प्रकार वर्णन किया गया है कि सब देवता गायत्री की उपासना एवं स्तुति करते हैं और उसी महाभण्डार से जो उपलब्ध करते हैं, उसका अनुदान अपने क्षेत्र में वितरित करते रहते हैं ।

इस सन्दर्भ में उपलब्ध अनेक विवरणों में से कुछ नीचे प्रस्तुत किये जाते हैं–

सर्ववेदसारभूता गायत्र्यास्तु समर्चना ।
ब्रह्मादयोऽपि संध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च ।।

–देवी भागवत ९६।९६।९५

गायत्री उपासना वेदों का सारभूत तत्व है, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि सभी देव सन्ध्या सहित गायत्री की आराधना करते रहते हैं ।

बताया जा चुका है कि परब्रह्म के विभिन्न स्फुल्लिंग ही देव शक्तियों के रूप में जाने जाते हैं । यों देवताओं की संख्या बहुत है । उल्लेख तो यहाँ तक मिलता है कि देवताओं की संख्या ३३ करोड़ है । पर सभी देव शक्तियों में तीन देवता प्रमुख माने गये हैं –ब्रह्मा, विष्णु, महेश । विवेचन मिलता है कि ब्रह्मा, विष्णु महेश की उत्पादक, पोषक और संहारक शक्ति के द्वारा ही इस विश्व की जीवन, विकास एवं परिवर्तन की क्रिया चल रही है ।

त्रिदेवों की परम उपास्य गायत्री महाशक्ति

ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देवों की अपनी निज की क्षमता नहीं वरन् वह आद्यशक्ति भगवती से ही उधार ली गई है । चन्द्रमा की चमक अपनी नहीं, वह सूर्य की आभा से चमकता है और उस आभा का प्रतिबिम्ब हमें चन्द्रमा की चन्द्रिका के रूप में परिलक्षित होता है ।

इस तथ्य का स्कंद पुराण में कतिपय कथा उपाख्यानों द्वारा इस प्रकार प्रतिपादन किया गया है–

इस सन्दर्भ में कुछ प्रमाण इस प्रकार हैं–

सर्वशक्तिपराविष्णो ऋग्यजुः साम सञ्ज्ञिता ।
सैषा त्रयीतपत्यंहो जगतश्च हिनस्ति या ।।
सैषयविष्णुःस्थितिम् स्थित्यां जगतः पालनोद्यतः ।
ऋग्यजुः सामभूताऽन्तः सवितुद्विज ! तिष्ठति ।।

"सम्पूर्ण संसार को सृजन, पालन एवं संहारात्मक रूप से प्रकट करने वाली भगवती अपरा स्वयं सर्वतन्त्र, स्वतन्त्र शक्ति एवं ऋग्यजुः और साम संज्ञा वाली है । यही त्रयी रूप में संसार में प्रकाशित होकर सृष्टि, स्थिति और संहार करती है ।"

मासि–मासि खेर्या यस्तत्र तत्रहि सा परा ।
त्रयी मयी विष्णु शक्तिरनस्थानं करोतिवै ।।
ऋचः स्तुवन्ति पूर्वाह्ने मध्याह्ने च यजूंषि वै ।
वृहद्रथन्तरादीनि सामान्यंगक्षये रवौ ।।
अंग सैषा त्रयी विष्णो ऋग्यजुः सामसंज्ञिता ।
विष्णु शक्ति स्वस्थानं सदादित्ये करोति सा ।।

"ब्रह्मा द्वारा रजोगुण धारण करने से सृजन, विष्णु द्वारा सत्व गुण के धारण करने से जगत् का पालन तथा सर्ग के अन्त में इस सम्पूर्ण विश्वाण्ड को अपने में लीन करने से यह त्रिमूर्ति स्वरूप वाली है और सविता में ऋग्यजुः और सामभूत होकर यह निवास किया करती है । पूर्वाह्न में ऋक्, मध्याह्न में यजुः और सायंकाल में वृहद्रथन्तरादि साम श्रुतियाँ सूर्य की स्तुति किया करती हैं । यही आदित्य में निवास करने वाली वेदत्रयी है ।"

न केवलं रवेः शक्तिवैष्णवी सा त्रयीमयी ।
ब्रह्माऽथ पुरुषो रुद्रस्त्रयमेतत्त्रयीमयम् ।।
एवं सा सात्विकी शक्तिर्वैष्णवी या त्रयीमयी ।
आद्या सप्तगणस्थं तं भास्वन्तमधितिष्ठति ।।

यह केवल रवि की शक्ति विष्णु स्वरूपिका ही नहीं है प्रत्युत ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र इन तीनों से युक्त एवं त्रयीमयी है । इस प्रकार से यह त्रयी आद्या शक्ति अपने सातों गणों में अवस्थित सूर्यदेव में समाविष्ट हैं ।

देवी भागवत् पुराण में भगवती गायत्री महाशक्ति की महत्ता का सविस्तार वर्णन है । उसे समस्त देवताओं का उपास्य और समस्त मन्त्रों का शिरोमणि बताया गया है । अनादि काल से उसी की सर्वत्र महिमा गाई जाती है और उपासना को प्रधानता दी जाती रही है । शास्त्र इतिहासों में ऐसा ही वर्णन मिलता है और देवताओं द्वारा अपनी उपासना का रहस्योद्घाटन करते हुए इसी महाशक्ति को अपना इष्टदेव प्रतिपादित किया जाता रहा है । शक्तियों का केन्द्र वस्तुतः यही महामन्त्र है । इसी की उपासना से मनुष्यों से लेकर देवताओं तक का कल्याण होना सिद्ध होता रहा है ।

तस्मान्नाहं स्वतन्त्रोऽस्मि शक्त्यधीनोऽस्मि सर्वथा ।
तामेव शक्तिं सततं ध्यायामि च निरन्तरम् ।।
नातः परतरं किञ्चिज्जानामि कमलोद्भव ।

अर्थात्—भगवान विष्णु ने शक्ति स्वरूपा देवी की प्रशंसा करते हुए एक बार पद्मयोनि ब्रह्मा जी से कहा था कि मैं भी स्वाधीन नहीं हूँ और देवी की शक्ति की अधीनता में रहता हूँ । उसी के बलबूते पर सब कुछ करने की सामर्थ्य मुझ में है । अतएव मैं निरन्तर उसी का सर्वथा ध्यान किया करता हूँ, क्योंकि इससे परे हे कमलोद्भव ! मैं किसी को नहीं जानता हूँ ।

तेन चाप्यहमुक्तोऽस्मि तथैव मुनिपुंगव ।
तस्मात्त्वमपि कल्याणपुरुषार्थाप्तिहेतवे ।।
असंशयं हृदाम्भोजे भज देवीपदाम्बुजम् ।
सर्वं दास्यति सा देवी यद्यदिष्टं भवेत्तव ।।

अर्थात्—देवर्षि नारद जी ने महर्षि व्यास से कहा—"हे मुनियों में परम श्रेष्ठ ! ब्रह्मा जी ने फिर मुझसे भी इस देवी की प्रबल शक्ति के विषय में कहा था । इसलिए हे कल्याण ! आप भी पूर्ण पुरुषार्थ प्राप्ति के लिए बिना किसी संदेह के अपने हृदय कमल में उसी देवी का भजन करो । उसके चरण कमल की भक्ति से वह भगवती आपको जो-जो भी अभीष्ट होगा, वह सभी कुछ प्रदान करेगी ।"

चिन्तयन्तु महामायां विद्यां देवीं सनातनीम् ।
सा विधास्यति नः कार्यं निर्गुणा प्रकृतिः परा ।।

ब्रह्मविद्यां जगद्धात्रीं सर्वेषां जननीं तथा ।
मया सर्वमिह व्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।

अर्थात्–"एक बार परम दुःखित देवों से ब्रह्मा जी ने कहा कि महा माया सनातनी भगवती का ध्यान करो । वही परा निर्गुण स्वरूपा हमारा सम्पूर्ण कार्य कर देगी । वह ब्रह्म विद्या, जगत् की धात्री और सब की माता है, जिसके द्वारा यह सम्पूर्ण चराचर त्रैलोक्य व्याप्त हो रहा है ।"

गायत्री का ही दूसरा नाम सावित्री है । शास्त्रों में उसे कहीं गायत्री कहीं सावित्री कहा गया है । आत्म कल्याण के क्षेत्र में जब उसे प्रयुक्त किया जाता है तब गायत्री नाम से और लौकिक सुख–सुविधाओं की आम वृद्धि में जब उसका प्रयोग होता है तब सावित्री कहते हैं । यह प्रयोग भेद से नामों में अन्तर आता है । मूलतः वह उसी एक महातत्व का वर्णन है । दिव्य भाव सम्पन्न होने से उसे देवी कहते हैं और समस्त ऐश्वर्यों का उद्गम केन्द्र होने से उसे भगवती कहा जाता है । बार–बार एक ही शब्द का उच्चारण अटपटा लगता है, इसलिए साहित्यिक सुविधा एवं सौन्दर्य की दृष्टि से गायत्री, सावित्री, देवी, भगवती आदि नामों का उल्लेख है । उसी महाशक्ति का आधार लेकर समस्त देव सत्तायें अपने कार्य संचालन में समर्थ हो रही हैं –

मन्त्राणां चैव सावित्री पापनाशे हरिस्मृतिः ।
अष्टादशपुराणेषु देवी भागवतं यथा ।।

समस्त मन्त्रों में सावित्री का मन्त्र सर्वोपरि एवं श्रेष्ठ होता है, जिस तरह हरि के स्मरण से पापों का नाश होता है और अठारह पुराणों में देवी भगवती सर्वोत्तम पुराण है, वैसे ही सावित्री मन्त्र होता है ।

न गायत्र्याः परो धर्मो न गायत्र्याः परन्तपः ।
न गायत्र्याः समो देवो न मंत्रो गायत्र्याः परः ।।
गातारं त्रायते यस्माद् गायत्री तेनसोच्यते ।

गायत्री से परे कोई भी नहीं है । गायत्री से परम अन्य कोई भी तपश्चर्या नहीं है । गायत्री के समान अन्य कोइ भी देवता नहीं है । गायत्री का मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है । जो कोई इस गायत्री का गायन अर्थात् जाप

किया करता है, उसका यह सावित्री त्राण किया करती है । इसीलिए इसका गायत्री–यह नाम कहा जाता है ।

यस्याः प्रभावमखिलं नहिं वेदधाता नो वा हरिर्नगिरिशोनहिं चाप्यनन्तः । अंशांशका अपिचते किमुतान्यदेवा स्तस्यै नमोऽस्तु सततं जगदम्बिकायैः ।

जिस देवी का पूर्ण प्रभाव ब्रह्मा, हरि, शिव और शेष कोई भी नहीं जानता है, इसके अंशांश भी नहीं जानते हैं । अन्य देवों की तो बात ही क्या ? उस जगत् की माता को सर्वदा नमस्कार है ।

समय–समय पर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र ने माता गायत्री का स्तवन करते हुए अपनी क्षमता का मूल आधार इसी महाशक्ति को स्वीकार किया है । ऐसे उपाख्यानों तथा स्तवनों से इतिहास, पुराणों के अगणित पृष्ठ भरे पड़े हैं–

देवि त्वमस्य जगतः किल कारणं हि ज्ञातं मया सकलवेद वचोभिरम्व । सांख्या वदन्ति पुरुषं प्रकृतिं च मां तां, चैतन्य भावरहितां जगतश्च कर्त्रीम् । किं तादृशासि कथमत्र जगन्निवासश्चैतन्यताविरहितो विहितस्त्वयाऽद्य ।। नाट्यं तनोषि सगुणा विविधप्रकारं नो वेत्तिकोऽपि तनुकृत्यविधानयोगम् । ध्यायन्ति यां मुनिगणाः नियतं त्रिकालं सन्ध्येति नाम परिकल्प्य गुणा सुरेशि ।। बुद्धिर्हि बोधकरणा जगतां सदा त्वं श्रीश्चासि देवि सततं सुखदा सुराणाम् । कीर्तिस्तथा मतिधृतिः किल कान्तिरेव, श्रद्धा रतिश्च सकलेषु जनेषु मातः ।

ब्रह्मा जी भगवती सावित्री का स्तवन करते हुए कहते हैं–हे देवि ! आप इस सम्पूर्ण जगत् की कारण स्वरूप हैं । इसका ज्ञान मैंने समस्त वेदों के वचनों से प्राप्त किया है । सांख्यवादी जिसको प्रकृति–पुरुष कहते हैं और उसको चैतन्य भाव से रहित जगत् की करने वाली बताते हैं । क्या आप ऐसी ही हैं ? यदि ऐसा ही है तो यह चैतन्य रहित जगत् का निवास कैसे किया है । आप सगुण होकर विविध ब्रह्म क्रिया करती हैं । आपके विधान के योग को कोई भी नहीं जान पाता । मुनिगण आपका तीनों कालों में ध्यान किया करते हैं । हे

सुरेशि ! इसलिए आपका नाम सन्ध्या, यह परिकल्पित किया है । जगतों में बोध करने वाली, आप बुद्धि सहा सुरों को सुखद श्री हैं । हे माँ ! आप समस्त जनों में कीर्ति–मति, धृति–श्रद्धा और रति रूप वाली हैं ।

नातः परं किल वितर्कशतैः प्रमाणं प्राप्तं मया यदिह दुःखगतिं गतेन । त्वं चैत्र सर्व जगतां जननीति सत्यं निद्रालुतां वितरता हरिणात्र दृष्टम् । त्वं देवि सर्व विदुषामपि दुर्विभाव्या वेदोऽपि नूनमखिलार्थतया न वेद । यस्मात्त्वदुद्भवमसौ श्रुतिराप्नुवाना प्रत्यक्षमेवसकलं तव कार्यमेतत् । कस्तै चरित्रम खिलम्भुवि वेद धीमान् नाहं हरिर्नच भवो न सुरास्तथान्ये । ज्ञातुं क्षमाश्च मुनयो न ममात्मजाश्च दुर्वाच्य एव महिमा तव सर्वलोके । यज्ञेषु देवि ! यदि नाम न ते वदन्ति स्वाहेति वेद विदुषो हवने कृतेऽपि । न प्राप्नुवन्ति सततं मखभागर्धे देवास्त्वमेव । विविधेष्वपि वृत्तिपासि ।

अत्यन्त दुःखित दशा को प्राप्त होने वाले मैंने सैकड़ों ही वितर्क करके भी इससे अधिक अन्य कोई भी प्रमाण प्राप्त नहीं किया है । निद्रित अवस्था में पहुँचने वाले स्वयं हरि ने यही देखा है कि आप सम्पूर्ण जगतों की जननी हैं । हे देवि ! बड़े–बड़े वेदों के तत्व ज्ञाता, विद्वानों की भी समझ में आपका स्वरूप नहीं आता है । साक्षात् स्वयं वेद भी सम्पूर्णतया आपको नहीं जानता है । इस श्रुति का उद्भव भी आपसे ही हुआ है, आपका यह समस्त कार्य प्रत्यक्ष ही है । कौन सा ऐसा बुद्धिमान है, जो इस भूमण्डल में आपका पूर्ण चरित्र जानता है ? मैं स्वयं नहीं जानता हूँ, न विष्णु और न शिव ही जानते हैं । तथा अन्य सुरगण भी कोई आपके चरित्र को नहीं जानते हैं । मुनिगण और मेरे पुत्र कोई भी समर्थ नहीं हैं । आपकी महिमा समस्त लोकों में अनिवर्चनीय ही है । हे देवि ! यज्ञों में वेद ज्ञाता लोग स्वाहा इस आपके नाम को नहीं कहते हैं तो हवन करने पर भी देवगण मख का भाग प्राप्त नहीं करते हैं । देवों की वृत्ति आप ही देवी हैं ।

जानन्ति ये न तव देवि ! परं प्रभावं ध्यायन्ति ते हरिहरावपि

मन्द चित्ताः । ज्ञातं मयाऽद्य जननि ! प्रकटं प्रमाणं यद्विष्णुरप्यतितरां विवशोऽद्यशेते । धन्यास्त एव भुवि भक्तिपरास्तवांघ्रौ त्यक्त्वान्यदेव भजनं त्वयि लीनभावाः । कुर्वन्ति देवि ! भजनं सकलं निकामं ज्ञात्वा समस्त जननीं किल कामधेनुम् । त्वं शक्तिरेव जगतामखिलप्रभावा त्वन्निर्मितं च सकलं खलुभावमात्रम् । त्वं क्रीडसे निजविनिर्मितमोह जाले नाट्ये यथा विहरते स्वकृते नटोवै ।। विष्णुः स्वयं प्रकटितः प्रथमं युगादौदत्ता च शक्तिरमलाखलुरक्षणाय । नात च सर्वमखिलं विवशीकृतोऽद्य यद्रोचते तव तथाम्ब करोषि नूनम् ।

सावित्री देवि की महिमा का वर्णन करते हुए ब्रह्मा जी कहते हैं, हे देवि ! जो आपका अतुल प्रभाव नहीं जानते हैं, वे ही लोग आपको त्यागकर मन्द–बुद्धिता के कारण हरि और हर का ध्यान, भजन किया करते हैं । इस महामण्डल में वे पुरुष परम भाग्यशाली एवं धन्य हैं, जो अन्य देवों को छोड़ कर आपके चरणों में भक्तिभाव से लीन रहते हैं । हे देवि ! आपको सबकी माता और कामनाओं की पूर्ति करने वाली समझ कर समस्त जगत् आपका निष्काम भजन किया करता है । यह सम्पूर्ण जगत् आपका ही बनाया हुआ है । आप ही की शक्ति इसमें विद्यमान है । एक नट की भाँति इसमें आप ही विहार किया करती हैं । विष्णु को आपने ही पालन के लिए प्रकट किया है और उसे शक्ति प्रदान की है, आपकी रुचि के अनुरूप ही वह सब करते हैं ।

भगवान विष्णु को अपने कार्य संचालन की शक्ति कहाँ से प्राप्त हुई । इसका वर्णन इस प्रकार आता है कि एक बार उन्हें अन्तः प्रेरणा यज्ञ करने की हुई, उस समय यज्ञ से गायत्री तेज प्रादुर्भूत हुआ और उसने आकाशवाणी के माध्यम से वरदान देकर विष्णु को सामर्थ्य सम्पन्न बनाया । यह प्रकट ही है कि भगवान राम और भगवान कृष्ण जिनकी उपासनायें इन दिनों प्रचिलित हैं, विष्णु देव के ही अवतार हैं ।

एकस्मिन्समये विष्णु बैकुण्ठे संस्थितः पुरा ।
सुधासिन्धुस्थितं द्वीपं संस्मार मणिमंडितम् ।।

यत्र दृष्टवा महामाया मनश्चासादितः शुभः ।
यज्ञं कर्तुं मनश्चक्रे अम्बिकाया रमापतिः ।।
जुहुवुस्ते हविः कामं विधिवत्परिकल्पिते ।
कृतेतु विततेहोमे वागुवाचां शरीरिणी ।।
विष्णुं तदा समाभाष्यं सुस्वरा मधुराक्षरा ।
विष्णो त्वं भव देवानां हरेः श्रेष्ठतमः सदा ।।
त्वां जनाः पूजयिष्यन्ति वरदस्त्वं भविष्यसि ।
अवतारेषु सर्वेषु शक्तिस्ते सहचारिणी ।।
भविष्यति ममांशेन सर्वकार्यप्रसाधिनी ।
साधयिष्यसि तत्सर्वं महत्तद्वरदानतः ।।
सास्त्वया नावमन्तव्या सर्वदा गर्वलेशतः ।
पूजनीया प्रयत्नेन माननीया च सर्वथा ।।

अर्थ—एक समय विष्णु बैकुण्ठ में विराजमान थे । उस समय उन्होंने सुदोदधि में मणियों से मंडित एक मण्डप का दर्शन किया था और वहाँ से ही महादेवि के मन्त्र को प्राप्त किया था । फिर रमा के स्वामी के हृदय में देवी का यज्ञ करने की प्रेरणा हुई । सविधि परिकल्पित हवि से होम किया । विस्तृत होम होने के बाद आकशवाणी के द्वारा देवि ने कहा था, जिसको सुस्वर मधुराक्षरों में विष्णु ने सुना था । आकाशवाणी में कहा—" हे विष्णु ! मैं परम प्रसन्न होकर तुमको वरदान देती हूँ कि तुम हरि से भी श्रेष्ठ देवों में प्रमुख बन जाओगे । लोग तुम्हारी पूजा करेंगे और तुम मेरी कृपा से वरदान दे सकोगे । तुम जो भू भार हरणार्थ अवतार धारण करोगे, उनमें मेरी शक्ति तुम्हारे साथ रहेगी । मेरे ही अंश से वह समस्त कार्य सिद्ध करेगी । यह मेरा वरदान होगा कि वह सभी कुछ करेगी । अतः तुम उसका अपमान गर्व में आकर मत करना और उसका सदा अर्चन एवं समादर करना ।

देवी की महिमा का वर्णन भगवान विष्णु इस प्रकार से करते हैं —

ज्ञातं मयाऽखिलमिदं त्वयि सन्निविष्टं त्वत्तोऽस्ति सम्भवलयावपि मातरद्य । शक्तिश्च तेऽस्य करणे विनतप्रभावा

ज्ञाताधुना सकललोकमयीति नूनम् । विस्तीर्य्य सर्वमखिलं सदसद्विकारं संदर्शयंश्च विकलं पुरुषाय काले । तत्वैश्च षोडशभिरेव च सप्तभिश्च भासीन्द्रजालमिव नः किल रञ्जनाय ।।

हे माता ! मैंने भली भाँति समझ लिया है कि यह सम्पूर्ण विश्व आपके ही अन्दर सन्निविष्ट हो रहा है और अब आप ही से इसका सम्भव और लय भी होता है । इसकी रचना करने में आपकी शक्ति विस्तृत प्रभाव वाली है और अब यह जान लिया है कि आप निश्चय ही समस्त लोकों से परिपूर्ण हैं । सद् और असद् विकारों से युक्त इस विश्व का विस्तार करके समय पर पुरुष को आप इसका विकल रूप दिखा देती हैं । सोलह और सात तत्वों से यह हमारे रंजन के लिए एक इन्द्रजाल की भाँति प्रतीत होता है

विद्या त्वमेव ननु बुद्धिमतां नराणां शक्तिस्त्वमेव किल शक्तिमतां सदैव । त्वं कीर्ति कान्ति कमलामलतुष्टिरूपा मुक्तिप्रदा विरतिरेव मनुष्यलोके । गायत्र्यसि प्रथमवेदकला त्वमेव स्वाहा स्वधा भगवती सगुणार्धमात्रा । आम्नाय एव विहितो निगमो भव्या संजीवनाय सततं सुरपूर्वजान्तम् ।।

भगवान विष्णु सावित्री देवी से कहते हैं कि जो बुद्धिमान पुरुष हैं, उनकी विद्या आप ही हैं और जो शक्तिशाली हैं, उनकी शक्ति भी आपका ही स्वरूप है । इस मनुष्य लोक में आप ही कीर्ति–कान्ति और अमल, तुष्टि स्वरूपणी मुक्तिप्रदा विभूति भी हैं । वेद की प्रथम कला गायत्री आप ही हैं । स्वाहा–स्वधा और सगुणा, अर्धमात्रा भगवती आप ही हैं । आपने देवों और पूर्वजों के रंजनार्थ आम्नाय और निगम का विधान किया है ।

भगवान शिव भी सावित्री का स्तवन करते हुए कहते हैं–

भुविं विहाय तवान्तकसेवनं क इहवाञ्छति राज्यमकण्टकम् । त्रुटिरसौ किल याति युगान्ततां न निकटं यदि तेऽङ्घ्रिसरोरूहम् । तपसि ये निरता मुनयोऽमलास्तव विहाय पदाम्बुजपूजनम् । जननि ते ! विधिना किल वञ्चिताः परिभवो

विभवे परिकल्पितः ।। न तपसा न दमेन समाधिना न च तथा विहितैः क्रतुभिर्यथा । तव पदाब्ज परागनिषेवणाद्भवति मुक्तिरजेभवसागरात् ।।

हे माता ! कौन ऐसा मूर्ख है, जो इस भूमण्डल में आपकी सान्निध्य-सेवा का परित्याग करके निष्कण्टक राज्य की इच्छा किया करता है, अर्थात् आपके समीप में स्थित रहकर सेवा के महत्व के सामने राज्य की प्राप्ति भी तुच्छ है । ऐसी त्रुटि फिर युगों तक दुखद होती है, यदि कोई आपके चरण कमल के समीप में नहीं पहुँचता है । जो मुनिगण आपके चरण कमल को त्याग कर निरन्तर तपस्या करने में ही निरत रहा करते हैं, हे जननि ! वास्तव में विधाता ने उन्हें वन्चित ही कर दिया है, और विभव में भी उनका परिभव कर दिया है । तप–समाधि तथा क्रतुओं के करने पर भी इस भव सागर से छुटकारा उस प्रकार का नहीं हो सकता है, जैसा केवल आपके चरण कमलों का समाश्रय लेने से होता है ।

एवं सत्ययुगे सर्वे गायत्रीजप तत्पराः ।
तार हल्लेखयो र्यापि जपे निष्णातमानसाः ।।
न विष्णुपासना नित्या वेदेनोक्ता तु कुत्रचित् ।
न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ।।
गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता ।
यया बिना त्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा ।।
तावता कृत्कृत्यस्य नान्यापेक्षा द्विजस्य हि ।
गायत्रीमात्र निष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात् ।।
युञ्जन्नन्यन् वा कुर्यादिति प्राह मनुः स्वयम् ।
विहाय तां तु गायत्रीं विष्णूपास्ति परायणः ।।
शिवैवास्ति रतो विप्रो नरकं याति सर्वथा ।
तस्मादाद्ययुगे राजन् गायत्रीजपतत्पराः ।।
देवी पादाम्बुजरता आसन्सर्वे द्विजोत्तमाः ।

अर्थ–सत्ययुग में सभी लोग गायत्री के जाप करने में तत्पर थे । अन्य

युगों में भी जाप में सब निष्णात मन वाले थे । भगवान विष्णु की उपासना नित्य है, ऐसा वेद में कहीं पर भी नहीं कहा गया है । विष्णु और शिव की दीक्षा भी नित्य नहीं है । केवल एक गायत्री की उपासना ही नित्य है, ऐसा सभी वेदों ने स्पष्टतया बतलाया है, जिसके बिना ब्राह्मण का तो सर्वथा अधःपतन हो जाता है । ब्राह्मण के लिए उतना ही अर्थात् गायत्री मन्त्र का जप करना सफलता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त होता है । उसे फिर अन्य किसी की अपेक्षा नहीं रहती है । केवल एक मात्र गायत्री की उपासना में निष्णात द्विज मानव-जीवन के परम पुरुषार्थ स्वरूप मोक्ष को प्राप्त कर लिया करता है । महर्षि मनु ने कहा है कि गायत्री के जप-आराधना करने वाला द्विज अन्य कुछ करे या कुछ भी न करे, अर्थात् अन्य किसी के भी करने की उसे संगति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती है । गायत्री का त्याग करके जो केवल विष्णु की उपासना करने में निरत रहता है अथवा शिवोपासना में प्रेम करता है, ऐसा विप्र सर्वथा नरक गामी होता है । इसलिए हे राजन् ! आप अर्थात् सतयुग में सभी गायत्री के जप करने में परायण रहा करते थे । सभी द्विज भगवती के चरण कमल में रति करने वाले हुए थे ।

इस प्रकार गायत्री को ब्रह्मा, विष्णु महेश आदि सभी देवताओं की उपास्य बताया गया है । इतना ही नहीं गायत्री को समस्त ज्ञान-विज्ञान, विद्या और शक्ति का स्रोत भी बताया गया है –

सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽन्यः समुदाहृतः ।
ब्रह्मादिदेवै गायत्री परमात्मा समीरितः ।।

यहाँ गायत्री मंत्र समस्त वेदों का सार कहा गया है । गायत्री ही परमात्मा कही गई है ।

गायत्री मंजरी में उल्लेख आता है कि एक बार पार्वती ने शंकर जी से उनकी उपास्य शक्ति के बारे में पूछा । तो शंकर जी ने अपने द्वारा गायत्री की ही उपासना किये जाने की बात कही । गायत्री मंजरी में कहा गया है–

गायत्रीं यो विजानाति सर्वं जानाति सननु ।
जानात्येतां न यस्तस्य सर्वाः विद्यास्तु निष्फला ।।४३।।

जो गायत्री को जानता है वह सब कुछ जानता है । जो इसको नहीं जानता उसकी सब विद्या निष्फल है ।

गायत्र्यैव तपो योगः साधन ध्यानमुच्यते ।
सिद्धिर्जनानां सा माता, नातः किंचित् वृहत्तरम् ।।४४।।

गायत्री ही तप है। योग है, साधन है, ध्यान है और सिद्धियों की माता मानी गई है । इस गायत्री से बढ़कर कोई दूसरी वस्तु नहीं हैं ।

गायत्री साधना लोके न कस्यापि कदापि हि ।
याति निष्फलतामेतत् ध्रुवं सत्यं हि भूतले ।।४५।।

कभी भी किसी की गायत्री साधना संसार में निष्फल नहीं जाती, यह पृथ्वी पर ध्रुव सत्य है ।

प्राप्स्यन्ति परमां सिद्धिं ज्ञास्यन्त्येत् तु ये जनः ।
गुप्त मनुं रहस्यं यत् पार्वती त्वां पतिव्रताम् ।।४६।।

हे पार्वती ! जो इस पवित्र रहस्य को जानेंगे वे परम सिद्धि को प्राप्त करेंगे ।

सभी शास्त्रों ने गायत्री को समस्त देवशक्तियों का उपास्य बताया है । अनादिकाल से प्रचिलित और सर्वश्रेष्ठ मानी गयी गायत्री उपासना का आश्रय लेकर कोई भी व्यक्ति आत्मिक और भौतिक समृद्धियों से पूरी तरह लाभान्वित हो सकते हैं ।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा